अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदानयज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रांति का संदेशवाहक

सौर जेष्ठ २४, शक १८७९ | सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार
वार्षिक मूल्य ६) | एक प्रति २ आना

···इसमें शक नहीं कि निष्क्रिय प्रतिकार के द्वारा हमने अपनी राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्त कर ली है, जिस पर तुम और तुम्हारे अच्छे पांति जैसे पश्चिमी देशों के शांति-प्रेमी लोग बड़े मुग्ध हैं। मगर अब हम हर रोज उस गलती की भारी कीमत चुका रहे हैं, जिसे हम अनजान में कर बैठे थे-या अधिक ठीक तौर पर कहूँ तो मैं कर बैठा था ! यह गलती थी—अच्छे प्रतिकार को अहिंसक प्रतिकार समझ बैठना ! अगर मैं यह गलती न करता, तो आज हमें यह घृणित दृश्य देखना न पड़ता कि कमजोर भाई अपने दूसरे कमज़ोर भाई को ही मूढ़ता से और अमानुष ढंग से कत्ल कर रहा है।

दिल्ली, २९-११-४७ —गांधीजी

वर्ष-३, अंक-३७ 卐 राजघाट, काशी 卐 शुक्रवार, १४ जून, '५७

पत्रकारों के साथ—

प्रश्न : आप जो ग्रामराज्य लाना चाहते हैं, वह कैसे स्थापित करेंगे ?

दादा : जनता के विधायक पुरुषार्थ से।

प्रश्न : क्या आपको विश्वास है कि आप जनता का मानस बदल सकेंगे ?

दादा : वह तो हम कर ही रहे हैं।

प्रश्न : क्या लोकमत-परिवर्तन से काम चलेगा ?

दादा : तब तो आपको लोकतंत्र की राह छोड़नी पड़ेगी।

प्रश्न : लोकतंत्र में कुछ दबाव आ ही जाता है।

दादा : इसलिए तो वहाँ फौज और पुलिस के अलावा कुछ नहीं चल सकता। आज की सरकारें कानून पर अमल कराने में असमर्थ हैं। इसलिए फ़ौजी डिक्टेटर-शाही ही सम्भव है। लेकिन इस देश में वह भी नहीं !

प्रश्न : कौन जाने किसी दिन कोई डिक्टेटर पैदा हो जाय और तब हमारा उद्धार हो !

दादा : तब तो आप भाग्यवाद के उपासक हुए। पुरुषार्थ या निर्माण का प्रश्न ही तब खत्म हो जाता है।

प्रश्न : निर्माण में आप उत्पादन की बजाय वितरण पर क्यों ज्यादा ज़ोर देते हैं ?

दादा : उत्पादन हो, वितरण न हो – यह नारा या तो पूँजीवाद का है या अपाहिजों का है। इन दोनों से आप बचेंगे तभी क्रान्ति होगी।

प्रश्न : आपका आन्दोलन राजनीति से कहाँ तक दूर है ?

दादा-बिलकुल दूर नहीं। हाँ, चुनाव से, चालू लोकतंत्र से हम जरूर दूर हैं, क्योंकि आजकी राजनीति को हम निकम्मी समझते हैं।

प्रश्नः तो सामाजिक निर्माण के लिए क्या आप सत्ता हाथ में नहीं लेंगे ?

दादा-सत्ता और शक्ति में फ़र्क होता है। शक्ति याने बिना फौज व पुलिस की मदद के आपकी व्यवस्था चलती रहे। क्रांति के बाद यह स्थिति आती ही है। लेकिन अहिंसक क्रांति का लक्ष्य सत्ता-हरण नहीं होता। अहिंसक क्रांति आज के पूँजीवादी संदर्भ को बदल कर नयी मान्यताएँ स्थापित करेगी।

प्रश्न : आप यह पूँजीवादी संदर्भ बता रहे हैं, लेकिन हम तो समाजवादी ढाँचा खड़ा करने जा रहे हैं।

दादा—समाजवादी ढाँचा तो वह है, जिसमें किसीकी मेहनत का पैसे से बदल नहीं होता। जहाँ श्रम का पैसे से मूल्यांकन किया, वहाँ समाजवाद एकदम कल्याण-वाद का रूप ले लेता है और ऐसी हालत में समाजवाद कभी भी स्थापित नहीं हो पायेगा। यही कारण है कि पश्चिम योरप और अमरीका का समाजवाद साम्यवाद-विरोधी बन बैठा। हमारा काम तो समाज में से असमानता खत्म करना है। रूस के तरीके से एक तरह की मुर्दार समानता (डेड लेवल इक्वॅलिटि) पैदा की जा सकती है। पर वह समाजवाद नहीं है।

समाजवाद में हरएक की आवश्यकता की पूर्ति इष्ट है। वेतन-समानता तो फौजीकरण (रेजिमेंटेशन) जैसी है और यंत्रीकरणवाद की देन है। उसका समाज-वाद से कोई वास्ता नहीं। यह सिद्धान्त ही गलत है। आखिरकार साम्यवाद है, तो पूँजीवाद की ही औलाद ! पुत्र उसका ही है, पर मूल नक्षत्र में पैदा हुआ है !

प्रश्न : भूदान से सरकार को कहाँ तक मदद मिलेगी ?

दादा :—यह तो ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता, लेकिन इससे हर ऐसी सरकार मदद मिलेगी, जो विषमता मिटाना चाहती है। हाँ, अगर वह आज का 'स्टेटस को' (statusquo) बनाये रखना चाहती है, तो मदद नहीं मिलेगी। कल्याणकारी राज्य समाजवाद नहीं है। कल्याणकारी राज्य में आप जनता के माई-बाप बन जाते हैं। इसमें न समाजवाद है, न लोकतंत्र ही।

प्रश्नः लेकिन लोगों का शिक्षण तो हम कर सकते हैं ?

दादा—कैसे ?

प्रश्नः अपनी एजेन्सी के द्वारा।

दादा—यही तो डिक्टेटरशिपवाली सरकार करती है। आपकी एजेन्सी के अलावा जनता में कोई गति ही नहीं पैदा हो पाती। तो समाजवाद कहाँ रह गया ?

प्रश्न : 'अधिक अन्न उपजाओ' पर आपकी क्या राय है ?

दादा : लेकिन अधिक उत्पादन से जरूरतमन्द को मिल ही जायेगा, इसका क्या प्रमाण है ? जितना अनाज सस्ता होता है, किसान की उतनी ही तबाही होती है।

प्रश्न : बात यह है कि समस्या की जड़ न्यूनता में नहीं, कहीं और ही दीखती है।

दादा : यही तो मैं कह रहा हूँ। एक कृषि-प्रधान देश में क्रांति का संदर्भ औद्योगीकृत देश की क्रान्ति के संदर्भ से भिन्न होता है। कृषि-प्रधान देश में छोटे-छोटे मालिक हजारों-लाखों होते हैं, बड़े मालिक कम। इन छोटे मालिकों के खिलाफ़ कानून कौन बना सकता है ? इसलिए सिर्फ हृदय-परिवर्तन ही एक उपाय है।

प्रश्नः भूदान का लक्ष्य कुछ सीमित-सा मालूम पड़ता है ?

दादा : सीमित भी है, असीमित भी। नजदीक का भी है, दूर का भी। दूर वाला है सम्यक् समाज बनाना याने मानव गुमनाम न रहे और मानवीय मूल्यों की स्थापना हो। यह चीज बड़े पैमाने पर असम्भव है, छोटे पैमाने पर ही हो सकती है। मनुष्यों में छोटे क्षेत्र में ही मानवीय संदर्भ आ सकता है, बड़े क्षेत्र में कृत्रिमता आ जाती है।

प्रश्न : आपका कोई निश्चित कार्यक्रम नहीं है।

उत्तर : है क्यों नहीं ? अपहरण व कर-वृद्धि, दोनों को ही हम असमर्थ समझते हैं। उनसे क्रान्ति की बजाय वैमनस्य पैदा होता है। अभी जो बजट आया, उसका इतना विरोध क्यों है ? यही टैक्स-वृद्धि के कारण। लोकमत जितना अनुकूल होता है, वैमनस्य कम होता है। आज कम्यूनिस्ट हिंसा को क्यों छोड़ रहे हैं ? क्योंकि दुनिया की ३५ प्रतिशत आबादी और एक-चौथाई क्षेत्रफल उनके अनुकूल बन चुका है। इसलिए उनके शांति वाले नारे को मैं सच्चा मानता हूँ, क्योंकि वह उनकी आवश्यकता है। वे एटम-बम का प्रयोग करते हैं और साथ-साथ शान्ति-कबूतर भी उड़ाते हैं। कबूतर वे हृदय से उड़ाते हैं, ऊपर-ऊपर से नहीं। इस वास्ते साम्यवाद से मुझे कोई डर नहीं लगता। उन्होंने खुद ही अपनी हिकमत छोड़ दी है। घबड़ाने की कोई बात ही नहीं है !

पत्रकार : क्योंकि आपके पास उनसे बेहतर उपाय मौजूद हैं ! +

+ इलाहाबाद की प्रेस-कॉन्फरेन्स में श्री दादा धर्माधिकारीजी के साथ पत्रकारों के प्रश्नोत्तर, ता० २७-५-'५७; प्रेषक : श्री सुरेशराम भाई।

www.vinoba.in

कार्यकर्ताओं के साथ—

प्रश्न : क्या आपकी योजना 'यूटोपियन' (केवल सुखस्वप्न) नहीं है ?

विनोबा : अगर यह काल्पनिक होती, तो ये सारे लोग सुनने क्यों आते ? क्या ये सारे बेकार हैं ? हजारों कार्यकर्ता भी सर्वोदय-कार्य में क्यों लगे हैं ? अगर काल्पनिक योजना होती, तो लोग समझते, एक पागल बोलता है, उसके पीछे क्या जाना है ! लेकिन लोग सुनने आते हैं, फिर सोचते हैं। बाबा विचार समझाते घूमता है, लगातार काम चल रहा है। लाखों लोगों ने दान दिया है, लाखों एकड़ जमीन मिली है। ग्रामदान हो रहे हैं। सबका ध्यान खींचा गया है। सरकार भी चुप नहीं रह पा रही है। कुछ-न-कुछ करना पड़ता है। मद्रास सरकार ने अभी ग्रामदानी गाँवों की जिम्मेवारी भी उठायी है। गाँववालों ने व्यक्तिगत मालकियत छोड़ दी है। सामूहिक मालकी हुई है। पहले उनको कर्जा व्यक्तिगत मालकी पर मिलता था। लेकिन अब सामूहिक मालकी पर कर्जा देने का प्रबंध उसको करना पड़ा। तो, ये सब पागल मनुष्य के काम होते, तो सब लोग यह क्यों करते ? इसलिए समझना चाहिए कि इसमें कुछ बात है। पागल विचार नहीं, बल्कि लोगों को पागल बनाने वाला विचार है। लोगों को इस काम में तन्मय करने वाला विचार है। भागवत में प्रह्लाद के बारे में लिखा है : "कृष्ण-ग्रह ग्रसितात्मा" कृष्ण-रूपी ग्रह ने प्रह्लाद को ग्रास लिया, क्योंकि प्रह्लाद कृष्ण के बगैर कुछ भी सोचता नहीं था। यह है पागल का अर्थ। तो, यह सबको पागल करने वाला आंदोलन है। ये जो बड़े-बड़े धर्म चलाये हैं, वे पागल ही माने गये हैं। इस्लाम को मानने वाला मुहम्मद पैगम्बर बिलकुल पागल माना गया था। क्रिस्ती विचार देने वाला शख्स क्रूस पर चढ़ाया गया ! लेकिन आज भी लोग क्राइस्ट का नाम ले रहे हैं। जहाँ सद्‌विचार होता है, वहाँ लोग पागल कहें, तो भी वह टिकता है, क्योंकि सद्‌विचार का अस्तित्व मानने से इन्कार कोई करते हैं, तो भी वह विचार जाता नहीं। सद्‌विचार में शक्ति होती है।

इसमें कोई शक नहीं कि केरल में भूमि-क्रांति होने वाली है। यहाँ इतनी कम जमीन है। इस हालत में चंद लोग जमीन पर कब्जा रखते हैं, तो क्या होगा ? झगड़े चलेंगे। नहीं तो क्या, प्रेम होगा ! मिलजुल कर काम करना होगा, अन्यथा क्या दारिद्र्य मिटेगा, बेकारी मिटेगी ? यह सब सोचने की बात है।

किन्हींको भास हुआ कि बाबा 'यूटोपियन' कर रहा है, तो वे समझे नहीं हैं। बल्कि जो समझते हैं कि हम "ऑलवेल" में है, वे 'फूल्स पैराडाइज" (मूर्खों के स्वर्ग) में हैं। आज की हालत आलवेल नहीं है। खतरनाक हालत है। सोचते नहीं और आँख बंद करके देखते हैं, इस वास्ते समझ में नहीं आता। बाबा सोचता है, आँख खोल कर देखता है, तो सारा स्पष्ट देख सकता है। इस वास्ते घूमता है, लोगों को समझता है। आज क्या हालत है ? जंगली जानवरों के समान परस्पर-संबंध नहीं है, इस वास्ते समूह नहीं बनता। यह सारा कोर्ट, वकील का धंधा क्यों चलता है ? गाँव के झगड़ों पर। गाँव में न्याय भी नहीं है। उस हालत में गाँव का भला कैसा होगा ? गाँव में अनाज नहीं, चंद लोगों के पास जमीन है, आपस-आपस में झगड़े हैं, धंधे नहीं हैं, न्याय नहीं है। बाहर से माल लादा जाता है। जाति-भेद है, आपस में नफरत चलती है, गाँव में गंदगी अपार है। सबका उपाय गाँव वाले सोचें, तब तो होगा, परंतु वह भी गाँव वाले सोचते नहीं। तालीम का इंतजाम तो सरकार के हाथ में सौंप दिया है। सबके दिमाग एक यंत्र में ढाले जाते हैं। कुल दुनिया में यही चलता है। पर गाँव का भला गाँव वालों के हाथ से ही होगा। ग्राम में ग्रामराज्य होगा, तो स्वराज्य का अनुभव आयेगा। इसलिए हमारी योजना यूटोपियन नहीं है, वास्तविक है। हमारा विश्वास है कि आप समझ जायेंगे, तो तिरुओणम (एक त्यौहार) की राह नहीं देखनी होगी।

(आलत्तुर, पालघाट, २४-५-'५७)

एक संवाद !

कम्युनिस्ट : आप हृदय-परिवर्तन की बात करते हैं, पर लोग दंड के बिना नहीं सुनेंगे। लोगों की भलाई के लिए भी दंड की जरूरत है !

विनोबा : आप कम्युनिज्म को कब से पसंद करते हैं ?

कम्युनिस्ट : जेल में थे, तब से।

विनोबा : जेल में क्या हुआ ?

कम्युनिस्ट : मार्क्स पढ़ा, तो उसकी प्रतिक्रिया हुई।

विनोबा : क्या मार्क्स ने तलवार से आप पर प्रभाव डाला या उसके ग्रंथ ने परिवर्तन किया ? मार्क्स ने हृदय-परिवर्तन ही किया न ?

कम्युनिस्ट : हाँ।

विनोबा : तो, हृदय-परिवर्तन सिद्ध हो जाता है। जैसे शंकराचार्य ने किया, वैसे मार्क्स ने ! उसकी गिनती हम अपने विचार में करते हैं। वह हृदय-परिवर्तनवादी था। उसने आपका इतना हृदय-परिवर्तन किया कि उसका एक-एक वाक्य आप एक वेदाभ्यासी की तरह प्रमाण मानते हैं। यहाँ तक कि बुद्धि को अलग रख कर भी उस पर अमल करते हो ! पूछते हैं कि क्रांति कैसे हुआ करती है, तो आप कहते हैं, "खोलिये, पुस्तक का फलाँ फलाँ चैप्टर; उसमें सब लिखा है।" इस तरह मार्क्स का आप पर इतना जो प्रभाव पड़ा है, क्या वह सब दंड-शक्ति के आधार से पड़ा है या सत्ता से या उसके विचार से ?

(कोट्टारकारा, क्विलोन, २७-४-'५७)

प्रश्न : नास्तिकवाद के बारे में आपकी क्या राय है ?

विनोबा : यह कुल का कुल जो चिंतन चल रहा है, वह कम्युनिज्म का ध्यान ही है। वे नास्तिक होते हैं, इसलिए प्रश्न पूछने वाले ने भी हमसे ऐसा सवाल पूछा। यह शख्स कम्युनिज्म के बारे में इतना ध्यान कर रहा है कि ध्यान करते-करते वह कम्युनिस्ट ही बन जायगा ! इसमें बड़ा खतरा है। विरोध के वास्ते भी हम किसीका ध्यान करते हैं, तो उसके जैसा बन जाते हैं। 'एळुतच्छन्' (मलयाली रामायण के लेखक) कहते हैं कि रावण राम का ध्यान करते-करते राममय बन गया। इसलिए तुम विरोध के लिए भी कम्युनिज्म का ध्यान छोड़ो, स्वतंत्र चिंतन करो।

ईश्वर समर्थ है !

'एथिइज्म' (नास्तिकवाद) कहता है कि ईश्वर नहीं है। तुम ईश्वर को भूल गये, तो कोई खतरा नहीं है, परंतु वह तुम्हें भूल जायगा, तो बड़ा खतरा है ! जिस दिन ईश्वर ही भूल जायेगा कि यह मेरी प्रजा है, तो वही नास्तिक बनेगा और कहेगा कि यह प्रजा 'नास्ति' (नहीं है)। तब बहुत बड़ा खतरा है। परंतु वह तो हमें भूलता नहीं है। बच्चा माँ को भूल गया, तो कोई खतरा नहीं है, क्योंकि माँ उसे भूलती नहीं है, वह उसे पुकारती है और खाना खिलाती है। परंतु माँ बच्चे को भूल जाय, तो बड़ा खतरा है। इसलिए तुम ईश्वर की चिंता मत करो। ईश्वर अपनी चिंता करने में समर्थ है। उसको बाबा के समर्थन की भी कोई जरूरत नहीं है !

केरल नेतृत्व दे सकत[illegible]

प्रश्न : आपका भूदान-क[illegible] पूरा होने के लिए कितने साल लगेंगे ?

विनोबा : जितने साल आप लगायेंगे, उतने लगेंगे। आप चाहेंगे कि इस साल यह काम खत्म करना है, तो इसी साल खत्म होगा। यह आपकी मर्जी पर है। बाबा की मर्जी पर इतना ही है कि यात्रा चालू रखना। यात्रा बन्द करना बाबा के हाथ में नहीं है, आपके हाथ में है। आप संकल्प कीजिये कि सब मिल कर चार महीनों में जमीन की मालकियत मिटा देंगे, तो काम जल्दी खत्म होगा। कितना समय लगेगा, उसका कोई 'टाइमटेबुल' नहीं बना है। यह जनता की भावना पर निर्भर है। आपके हृदय को अच्छी बात जँच जाय, तो काम होगा। इसलिए आप निश्चय कीजिये कि तिरुओणम् (त्यौहार) के दिन, जिस रोज महाबली ने दान दिया था, हम ग्रामदान के काम को पूरा करेंगे, तो फिर इसी साल केरल में एक बड़ा काम होगा। फिर सरकार भी कानून के लिए अनुकूल होगी। यह इतनी बड़ी घटना होगी कि सारे हिंदुस्तान पर इसका असर होगा और केरल भारत का नेतृत्व करेगा।

(चालकुडी, त्रिचुर, १५-५-'५७)

www.vinoba.in

संथाल परगने में नशाबंदी के लिए अहिंसक कदम!

(मोतीलाल केजरीवाल)

गाँव-गाँव में खुली हुई भट्टियों और नशे की दूकानों को बंद करने की आवश्यकता पर पूज्य विनोबाजी से चर्चा करने का एक सुअवसर ७ मई को प्रातःकाल उस समय मिला, जब वे केरल प्रदेश के सुरम्य देहाती पथ पर पदयात्रा करते हुए एरणाकुलम् से आलुवाय जा रहे थे।

ग्रामदानी गाँव और नशापान

मैंने कहा कि संथाल परगने में छोटा-बरमसिया नामक संथाली ग्राम का 'सर्वदान' हुआ है। ग्राम के कुल संथाल भाइयों ने जमीन की मालकियत छोड़ दी। उस ग्राम के संथाल भाइयों को एकत्र करके हमने यह कहा कि जब तक नशा-पान की बुराई को आप न छोड़ेंगे, तब तक आपका ग्रामदान कुछ फलप्रद नहीं होगा। गाँववालों ने मुझे उत्तर दिया कि वे नशे की इस बुराई को छोड़ना चाहते हैं और कुछ ने तो नशा छोड़ भी दिया है, किंतु गाँव में खुली हुई शराब की भट्टी, पीने वालों के लिए लोभ का कारण बनी हुई है। **गाँववालों ने यह भी बतलाया कि उन्होंने सरकार को कई बार दरख्वास्तें भी दीं कि शराब की भट्टी गाँव में बन्द कर दी जाय। भट्टी उठने की तो बात ही क्या, किंतु गाँववालों के कथनानुसार उनकी दरख्वास्तों की प्राप्ति-स्वीकार भी नहीं दी गयी।** ये बातें बतला कर मैं ने विनोबाजी की राय जाननी चाही कि सर्वदानी गाँव में हम भूदान-कार्यकर्ताओं को इस प्रसंग पर क्या करना चाहिए?

नशाबन्दी का कुछ पूर्व-इतिहास

संथाल परगना में नशाबंदी के बारे में वहाँ के कार्यकर्ताओं ने सन् १९४७ से—स्वराज्य स्थापित होने के बाद से ही—काफी जोर लगाया था और इस सिल-सिले में संथाल परगने में "नशा-विरोधी समिति" की स्थापना भी की गयी थी। कार्यकर्ताओं ने यह भी सोचा था कि आवश्यकता होने पर नशे की दूकानों पर शांतिमय पिकेटिंग भी वे करें। विनोबाजी के सामने उसी समय ये बातें रखी गयीं थीं और उन्होंने "शांतिमय निरोध" करने का अधिकार हम लोगों का है, ऐसी स्पष्ट सूचना भी पत्र लिख कर हमें दी थी।

आज की चर्चा में विनोबाजी ने दो सेकेण्ड चुप रहने के बाद पहले की बातों का उल्लेख करते हुए कहा: "नशे की दूकानें बंद होनी ही चाहिए और यदि ऐसे गाँवों में शराब की दूकानें बंद नहीं होती हैं, तो अहिंसा की मर्यादा में रह कर हमें उसे बंद कराने का पूरा प्रयत्न भी करना चाहिए।"

पिकेटिंग भी किया जा सकता है!

विनोबाजी की मुखमुद्रा पर स्पष्टतः गंभीरता और दृढ़ता के भाव झलक रहे थे। उन्होंने अपनी बातों को स्पष्ट करते हुए यह भी कहा कि **मान लीजिये कि इसके दूसरे कार्यकर्ताओं को पिकेटिंग भी करना पड़े, तो भी खुशी-खुशी यह** करना चाहिए। विनोबाजी के साथ होने वाली हमारी इस चर्चा को अ० भा० कॉंग्रेस-कमिटी के जनरल सेक्रेटरी श्री श्रीमन्नारायणजी अग्रवाल भी सुन रहे थे। विनोबा ने पुनः कहा कि यह अच्छा हुआ कि इस चर्चा को श्रीमन्नारायण भी सुन रहे हैं। उन्होंने आगे बताया कि किस तरह नशा-विरोधी जाँच-समिति की स्थापना श्री श्रीमन्नारायणजी अग्रवाल की अध्यक्षता में हुई थी एवं जिसकी नशा बंद कर देने की सिफारिशों को भारत-सरकार ने संपूर्णतः मान भी लिया है तथा सरकार यह भी चाहती है कि सिफारिशों को कार्यान्वित इस तरह किया जाय, जिससे कि लुकछिप कर भी शराब न बिके। इस सिलसिले में होने वाले आवश्यकता से अधिक विलंब की ओर भी विनोबाजी का खेदसूचक संकेत भी था। चर्चा समाप्त करते-करते उन्होंने मुझको पुनः कहा:

पहले तो वे पिकेटिंग-कार्य को इसलिए रोकते थे, ताकि हमारा ध्यान विभिन्न विषयों की ओर बँट न जाय। अब चूँकि वहाँ पर आवश्यकता उपस्थित हो गयी है और चूँकि बहुत दिनों तक देखा जा चुका है और अब इसको टाला भी नहीं जा सकता, इस कारण शराब की दूकान बंद करने के लिए अहिंसा की मर्यादा में रह कर हम काम करें, तो इसके लिए उनका आशीर्वाद हमें सदा प्राप्त होगा!

पुनः पुनः परामर्श

विनोबाजी ने अपनी वाणी के प्रवाह को जारी रखा। नशे से होने वाली हानियों का चित्र मानों उनकी आँखों के सामने नाच रहा हो। उन्होंने कहा कि मैं अपने साथियों से भी इसके बारे में विचार करूँ कि तत्काल किस तरह कार्य शुरू किया जाय। उन्होंने आशीर्वाद के साथ आश्वासन दिया कि उनका (विनोबाजी का) परामर्श भी हमें इस संबंध में बराबर मिलता रहेगा।

जयप्रकाशजी का समर्थन

बहुत दिनों से दिल में एक वेदना-सी मालूम हो रही थी। गांधीजी की दुहाई देकर टिकी हुई सरकार के शासन के बारह वर्ष बीत जाने पर भी नशे की दूकानें नहीं उठ रही हैं, यह बात शूल की तरह चुभती है। बाबा की वाणी ने घाव पर मलहम का काम किया। चर्चा समाप्त होने पर जैसा ही अगला पड़ाव नजदीक आया, श्री जयप्रकाशजी आ मिले और मैंने बाबाजी से की हुई चर्चा का उल्लेख उनके सामने किया। वे भी प्रसन्न हुए और जो कुछ बोले, उसके प्रत्येक शब्द और अक्षर नशाबंदी की आवश्यकता और उसके लिए किये जाने वाले प्रत्येक शांतिमय कार्य का समर्थन कर रहे थे। इस तरह देश के इन दो विभूतियों के विचारों को सुन कर तथा जान कर मेरे हृदय को शांति मिली और मैंने सोचा कि हमारे यहाँ नशाबंदी का एकांत-मुहूर्त आ पहुँचा है और संथाल-परगना के कार्यकर्ता इसकी क्रियात्मक सिद्धि के लिए विचार-विमर्श करके कोई-न-कोई कार्य शीघ्र आरंभ करेंगे।

बिहार सरकार से विनम्र निवेदन

बिहार प्रदेश के प्रशासन को सम्हाले हुए जो आदरणीय पुरुष वहाँ बैठे हुए हैं, उनसे मेरा संबंध पिता-पुत्र अथवा अग्रज और अनुज का-सा है। सन् १९२१ से ही उनकी कमांड में रहने वाले एक सैनिक अथवा उनके एक तुच्छ साथी के रूप में रह चुका हूँ। गांधीजी के प्रति उनकी निष्ठा मेरी देखी हुई और जानी हुई है। मैं यह भी महसूस करता हूँ कि उनके लंबे प्रशासन-काल में अब तक जो-नशा पान का कलंक लगा हुआ है तथा नशे से होने वाली आमदनी पर प्रशासन का जो कार्य चल रहा है, वह एक घोर लज्जा की बात है। उन सभी महानुभावों से मेरा जोरदार अनुरोध है कि अब जरा भी देर न करके नशे से होने वाली आबकारी की इस ना-पाक आमदनी का मोह वे छोड़ दें।

शराब-बंदी और कम्यूनिस्ट-सरकार!

प्रश्न: क्या अहिंसा, शराब-बंदी आदि में कम्युनिस्टों के साथ कोई 'कॉम्प्रमाइज़' (समझौता) या 'कोऑपरेशन' (सहयोग) हो सकेगा?

विनोबा: अहिंसा में क्या, समझौता करने की जरूरत है? जरूरत है हिंसावालों को हिंसा छोड़ने की। धीरे-धीरे वे उसे छोड़ेंगे। अभी डांगे पार्लमेंट में हैं, जो वहाँ कम्युनिस्ट पार्टी के मुखिया हैं। वहाँ वे क्या करेंगे? वहाँ जो प्रस्ताव आयेंगे, उन्हें देखेंगे, उनमें कोई दोष हों, तो वे दिखायेंगे। इसी तरह दूसरे लोग भी दोष दिखायेंगे और दोष नहीं हों, तो बिल को मंजूरी देंगे। इस तरह उनका समझौता या सहयोग होगा। अच्छी चीज के साथ सहयोग देने के लिए वे राजी होंगे तो क्या इस हालत में हम उनका सहयोग नहीं लेंगे? दूसरी कुछ गलत बातें वे करते हैं, इसलिए हम उनका सहयोग क्यों नहीं लेंगे?

सर्वोदय का धंधा!

सर्वोदय का यह धंधा है कि दूसरों के साथ मेल करके उन्हें हजम करना। सबको खा जाना, यह सर्वोदय का धर्म है! तुम कहोगे कि आप कम्युनिस्टों को खा रहे हैं! तो हम कहेंगे कि अरे, हमारा पेट इतना मजबूत है कि हम उन्हें हजम कर लेंगे!

शराबबंदी को कम्युनिस्ट सरकार रद्द करना चाहती है, ऐसा भी प्रश्नकर्ता ने कहा है। हम नहीं मानते कि वे इतने बेवकूफ हैं। अगर वे ऐसा कोई काम करने जायेंगे, तो बिल्कुल ही मूरख साबित होंगे। यह बात जरूर है कि पैसे की जरूरत है। लेकिन वह तो दूसरे प्रकार से युक्ति से हासिल करना होगा। बंबई में और मद्रास में शराबबंदी हुई, लेकिन वहाँ पैसा कम नहीं पड़ा। उसी तरह यहाँ की सरकार भी शराबबंदी चलायेगी, ऐसा हम मानते हैं। हमें आशा है कि वे ऐसे अवलक्षणी नहीं होंगे कि ऐसे काम करके अपशकुन कर लेंगे! शराबबंदी होने पर भी लोग चोरी से शराब पीते हैं तो उसके लिए भी उपाय-योजना सोचेंगे। परंतु एक दफा शराब-बंदी हो चुकी, तो फिर से शराब शुरू करने की हिम्मत वे नहीं करेंगे, क्योंकि वह हिम्मत नहीं होगी, बल्कि मूर्खता होगी। क्या वे अपने विरोध में एक नैतिक शक्ति खड़ी करेंगे? जो राजनैतिक पक्ष अपनी मजबूती करना चाहते हैं, वे नैतिक शक्ति हाथ

www.vinoba.in

में रखना चाहते हैं, उसे खोते नहीं। प्रश्न पूछने वाले को डर है कि शायद वे फिर से शराब शुरू करेंगे। इसलिए वह हमसे कहता है कि आप अपनी राय क्यों नहीं जाहिर करते हैं? अरे, उन्हें वैसा करने तो दो, फिर देखेंगे! इस बारे में हमारा अभिप्राय तो पचासों दफा जाहिर हो चुका है, परंतु कोई शख्स फलाना काम करेगा, ऐसा अंदाज पहले से ही हम नहीं करते हैं। हमारा विश्वास है कि उनके लिए जो-जो धारणाएँ लोगों ने मानी हैं, वे गलत साबित होंगी, क्योंकि वे चाहते हैं कि आज इस प्रांत में सत्ता मिली है, तो दूसरे प्रांतों में भी वह मिले। अतः यहाँ वे कुछ पुण्य प्राप्त करेंगे तभी तो उन्हें दूसरे प्रांतों में सत्ता मिलेगी?

(चालकुटी, त्रिचुर, १५-५-'५७) ——

केरल की क्रांति-यात्रा से–

(महादेवी)

रास्ते में चलते समय एक भाई जीवनदान के बारे में पूछ रहे थे। बाबा ने कहा, "संसारी लोग जीवनदान करना जानते ही हैं! शादी होते ही तो वे अपना पूरा जीवन पत्नी और बाल-बच्चों को दान कर देते हैं, उनके लिए काम करते हैं, चिंतन करते हैं और त्याग भी करते हैं। उसी दृष्टि को अगर व्यापक बना लें, ग्राम के लिए काम करें, चिंतन करें और त्याग करें, तो जीवन-दान हो गया।" फिर समझाते हुए कहा, "रामकृष्ण परमहंस से किसीने पूछा कि ईश्वर-भक्ति कैसे होगी?" तो उन्होंने कहा, घर में पत्नी और बच्चा आदि मरता है, तो रोते हैं या नहीं? वैसे ही ईश्वर-प्राप्ति के लिए रोना चाहिए तब ईश्वर-भक्ति होगी।"

× × ×

राजपालयम् असल में ९ मील दूर था। एक पेड़ लगाने के लिए बाबा को ३ मील अधिक चलना पड़ा। यह मुझे जँचा नहीं। मैंने बाबा से शिकायत की— "हमको मालूम भी नहीं होता, खुद प्रोग्राम स्वीकार कर लेते हैं।" इस पर बाबा ने कहा, कुमार स्वामी राजा उड़ीसा के गवर्नर थे। उनकी इच्छा के अनुसार, "तमिलनाड़ आऊँगा, तो आपके गाँव भी आऊँगा," ऐसा हमने स्वीकार किया था। वे मेरे आनेके इन्तजार में थे। १५ दिन पहले ही उनकी मृत्यु हो गयी। उनके स्मरणार्थ हमारे हाथ से एक वृक्ष लगाना चाहते हैं, इसलिए वहाँ जाना जरूरी था। तीन मील फासले की तुलना में प्रेम तो कई गुना महत्त्व का है!

× × ×

'विनोबा-निकेतन' में बाबा का पड़ाव था। यह आश्रम राजम्मा और कुछ मित्रों ने मिल कर, करीब तीन साल हुए, स्थापन किया। उस आश्रम के जरिये भूदान का काम चलता है। ७-८ लोग आश्रम में हैं। इन लोगों के प्रयत्न से कई ग्रामदान मिले हैं। राजम्मा को हमारे देश के सर्वोदय-प्रवृत्तिवाले करीब हर प्रांत के लोग जानते हैं। उसकी मूर्ति छोटी है, लेकिन कीर्ति बड़ी है। उसके जीवन की झाँकी थोड़े में देना उपयुक्त होगा।

राजम्मा एक सुसंस्कृत परिवार की है। उसके पिता संस्कृत के पंडित हैं और वैद्य भी हैं। माता भक्तिमान हैं। अपनी पूजा में बालकृष्ण के साथ ईसा मसीह की भी मूर्ति रखी है। अर्थात् धर्म-समन्वय की भावना घर में है। इन माता-पिता ने राजम्मा को अच्छी तरह विद्याध्ययन कराया। वकालत तक पढ़ाया। लेकिन वकालत करने की वृत्ति राजम्मा में नहीं थी। वह बचपन से बालगोपाल की भक्ति करती थी। गरीबों की सेवा करने की ओर उसका विचार दौड़ता था। जब महात्मा गांधी का देहावसान हुआ, तब आजन्म ब्रह्मचारिणी रह कर देश के लाखों बालगोपालों की सेवा करने का संकल्प उसने कर लिया और वर्धा जाकर विनोबाजी के चरणों में अपने को समर्पित किया। उनके आदेश के अनुसार चरखा-संघ के सब कामों में–कताई, बुनाई और संचालन के कामों में दक्षता पायी। चरखा-संघ वाले राजम्मा को असम सरीखे देश के कोने-कोने के प्रदेशों में भी बेखटके भेज सकते थे और वह कामयाब होकर लौटती थी। वह बिलकुल स्वाभाविक, सादा फकीर है। उसने ग्रामोद्योगी वस्तुएँ ही खाने का नियम रखा है और उसको निभाती है। कई जगह उसको भूखा तक रहना पड़ता है।

बाबा का बाण!

पळनी के निधिमुक्ति और तंत्रमुक्ति के संकल्प के बाद उसी स्थान पर जिले और प्रांत की जिम्मेवारी उठा लेने का बाबा का बाण छूटा। उनमें प्रथम बाण यह राजम्मा है और सारे केरल प्रांत में शून्य बन कर घूमने का बाबा का आदेश उसको मिला। कई कठिनाइयाँ आती हैं। उन्हें हँसते हुए निभाने की कोशिश करती है। सर्वोदय-सम्मेलनों में राजम्मा को निडरता से हिंदी में भाषण देते हुए हम सबने सुना है। अब केरल-यात्रा में राजम्मा को बाबा के भाषणों का मलयालम अनुवाद भी वही करती है। भाषणों के अनुवाद के अलावा मुलाकातों के समय दोनों ओर के दुभाषिये की भूमिका निभाना, बाबा के साथ १०-१२ मील चलना, यात्रीदल की व्यवस्था आदि संभालने में मदद करना, ये सब उसके दिन-क्रम के अंग बने हुए हैं। इस तरह वह अनन्य भाव से सेवा में लगी है, जो शिक्षित बहनों के लिए अनुकरणीय है। ——

गाँव का जब कायापलट होता है:

"हम आठ थे, अब एक होंगे!"

(आचार्य राममूर्ति, खादीग्राम)

"पूरा गाँव तैयार न हो, तो क्या मैं बैठा रहूँ? अपनी जमीन का छठवाँ हिस्सा पहले ही दे चुका हूँ, लेकिन १९५७ में तो पूरा स्वामित्व-विसर्जन होना चाहिए, पर मैं दूसरों की राह देखता बैठा रहूँ, तो मुझमें और दूसरे लोगों में अन्तर ही क्या रहेगा? मैं शुरू से भूदान-कार्यकर्ता रहा हूँ, आज भी सत्याग्रही लोकसेवक हूँ, तो आज समय आ गया है कि मेरा सत्य और सेवकत्व प्रकट होना चाहिए, नहीं तो किस अधिकार से मैं दूसरों के सामने स्वामित्व-विसर्जन की बात करूँगा? मेरे गाँव में क्रान्ति-यात्रा टोली आये और खाली हाथ चली जाय, यह मेरे लिए असह्य है।"

गणेश बाबू के मन में बराबर उथल-पुथल मची हुई थी। वे हमारी व्यवस्था में लगे हुए थे, दिन-रात दौड़-धूप कर रहे थे, लेकिन मन चिन्ता से आकुल था। एक सत्याग्रही की जीवन-निष्ठा और सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रश्न था। जो मान का धनी है, उसके लिए आन जान से भी बढ़कर है। हमारी टोली गणेश बाबू के गाँव १३ मई को सुबह पहुँचने वाली थी। गणेश बाबू हमारे पड़ावों की पूर्वतैयारी के सम्बन्ध में कई दिन की दौड़धूप के बाद १२ ता० की रात को लौटे थे। १२ की रात बची थी और १३ का दिन। हमारे पहुँचने पर १३ की शाम को गाँव की सभा में क्या घोषणा होगी, यह प्रश्न था। १२ मई गणेशबाबू के लिए कसौटी का दिन था।

उस दिन हम लोग पड़ाव पर ८-३० बजे पहुँचे। नदी के किनारे घड़ी-घंटी बजने की ध्वनी दूर से सुनायी दे रही थी। नाव से उतरते ही फूल, माला, अक्षत और नारों से हमारा स्वागत हुआ। गणेश बाबू स्वयं हाथ में सूत की रंगीन माला लिये खड़े थे। मेरी निगाह गणेश बाबू पर थी और मन यह सुनने को उत्सुक हो रहा था कि आज बोरने गाँव ग्रामदान की घोषणा करेगा। गाँव के नर-नारियों के बीच चलते हुए हम ऐसा अनुभव कर रहे थे, जैसे विजय-यात्रा पर जा रहे हों। मैं सोच रहा था कि गणेश बाबू कुछ कहेंगे। जुलूस आगे बढ़ता जा रहा था, पर गणेश बाबू चुप थे। संकेत स्पष्ट था। दिल को धक्का-सा लगा, लेकिन मेरा खयाल है कि मैं चेहरे से विराग न प्रकट होने देने का सफल प्रयत्न कर सका।

मिनटों में निवास पर पहुँच गये, बैठे। नाश्ते की हलचल शुरू हुई। आज दोनों टोलियाँ साथ थीं। मुझसे रहा नहीं गया, चर्चा छेड़ ही दी।

मैं—गणेश बाबू आज तेरह तारीख है।

गणेश बाबू—(जरा धीमी आवाज में) हाँ, है तो, लेकिन गाँव अभी तैयार नहीं है।

मैं—क्यों, क्या बात है? चर्चा तो ज़ोरों से चल रही थी!

ग० बाबू—हाँ, चल तो रही थी, लेकिन लोगों में साहस नहीं हो रहा है।

मैं—आखिर भय किस बात का है?

ग० बाबू—लोग सोचते हैं कि आज जितनी जमीन उनके पास है, उतनी में तो गुज़र होता नहीं। फिर भूमिहीनों को मिलाने के कारण इससे भी कम हो जायेगी, तो कैसे गुजर होगा?

मैं—मनुष्य प्रगति के लिए सुरक्षा के विचार को मन से हटा नहीं सकता। गाँव के लोगों को यह भी समझाना पड़ेगा कि ग्रामदान में आज की व्यवस्था के मुक़ाबिले कहीं अधिक सुरक्षा है। सच बात तो यह है कि आज की मालिकी ने गरीब-अमीर, दोनों के लिए अरक्षा ही अरक्षा पैदा कर रखी है। पक्की सुरक्षा तब होगी, जब पूरा गाँव परिवार बन जायेगा। लेकिन यह तो बताइये कि क्या गाँव में कुछ परिवार भी तैयार नहीं हैं?

गणेश बाबू—ऐसी बात नहीं है। चार परिवारों की तैयारी मालूम पड़ती है। मेरा अपना परिवार तो तैयार है ही।

मैं—क्या आपने अपने छोटे भाइयों, पिताजी, तथा घर की स्त्रियों को स्वामित्व-विसर्जन का मतलब समझा दिया है? स्वामित्व-विसर्जन केवल ज़मीन बाँटना नहीं है, वह जीवन का एक नया दर्शन है।

गणेश बाबू—हाँ, वे सब अच्छी तरह समझ गये हैं। मेरे पिताजी तो दूसरों को भी समझाते हैं। पिछली रात हम लोग आपस में एक बजे तक चर्चा करते

www.vinoba.in

रहे। घर का काम-काज मुख्य रूप से मेरा छोटा भाई देखता है। चर्चा के अन्त में उसने कहा-'आप हमारी तरफ से निश्चिंत रहें। आपकी प्रतिष्ठा परिवार की प्रतिष्ठा है। आप जो भी निर्णय करेंगे, हम सब आपके साथ हैं।' इतनी बात सुनने पर मैंने उसी क्षण तय कर लिया कि मेरे परिवार के स्वामित्व-विसर्जन की आहुति १९५७ को मिलनी ही चाहिए। साथी मिलें तो अच्छा, न मिलें तो अच्छा। आदमी खुद चल देता है, तो साथी मिल ही जाते हैं।

बोरने गाँव से खाली हाथ नहीं लौटना पड़ेगा, इतना भरोसा हो गया। हम लोगों ने तय किया कि दोपहर के भोजन-विश्राम के बाद उन परिवारों की बैठक बुला ली जाय, जो स्वामित्व-विसर्जन के आधार पर सम्मिलित परिवार बनाने को तैयार हैं।

शाम को ६ बजे सभा होने वाली थी। करीब २-३० बजे परिवारों के मुख्य व्यक्ति इकट्ठा हुए। गणेश बाबू के पिताजी मौजूद थे। गणेश बाबू के अलावा उनके दोनों भाई भी थे। सबके सामने स्वामित्व-विसर्जन का हिसाब लगाया जाने लगा। विचार यह हुआ कि मालिक-मालिक मिल जायँ, तो वह सहकारी-मालिकी भले ही हो जाय, पूरा स्वामित्व-विसर्जन नहीं होगा। स्वामित्व-विसर्जन तो तब होगा, जब वह समाज के निमित्त हो और उसका लाभ समानता के आधार पर उनको भी मिले, जो आज स्वामित्व से वंचित हैं। यह बात सबने मान ली। जो परिवार स्वामित्व-विसर्जन के लिए तैयार थे, उनके पास कुल मिला कर ६२½ बीघा भूमि निकली और खाने वाले व्यक्ति ३३, यानी एक के लिए दो बीघा भी नहीं! किसी के घर में खेती के अलावा दूसरा कोई धंधा नहीं। ऐसी स्थिति में यह सवाल उठा कि इतनी भूमि पर कितने भूमिहीन शरीक किये जायँ? सोच-विचार के बाद तय हुआ कि इन्हीं परिवारों के आश्रित होकर जो हलवाहे इस भूमि पर स्थायी रूप से मज़दूरी करते रहे हैं, उतने ही शामिल किये जायँ। ऐसे तीन परिवार निकले। उनमें कुल १३ व्यक्ति थे। इस तरह ६२½ बीघे पर जीने वाले ४६ व्यक्ति निकले। भूमि पर भार अधिक मालूम हुआ, लेकिन दूसरा उपाय ही क्या था? सबने मिल कर निश्चय कर लिया कि तीन भूमिहीन परिवार अवश्य शरीक हों। सबके चेहरे से कर्तव्य पूरा करने का सात्विक संतोष झलक रहा था। मैं बार-बार गणेश बाबू के बूढ़े पिताजी की ओर देखता था। लोग कहते हैं कि बुढ़ापे में तृष्णा बढ़ जाती है। पर गणेश बाबू के पिताजी की मुस्कान एक क्षण के लिए भी कम नहीं हुई। उनकी आँखों की आड़ से उनका अविचलित मन बोल रहा था कि दुर्गापूजा में भक्त जिस निष्ठा से मूर्ति की स्थापना करता है, उसी श्रद्धा से गंगा में उसका विसर्जन भी करता है। अगर उसके मन में मोह आ जाय और वह विचलित हो जाय, तो उसकी भक्ति क्या? पिताजी बैठक से उठे और बाहर जाकर खेलते पोते को गोद में उठा लिया। पितामह ने जिस मालिकी को अपने लिए और अपने बच्चों के लिए कमाया था, उसे बच्चों के बच्चों के लिए विसर्जित कर दिया! ऐसा लगता था, मानों बच्चे के कान में कह रहे हों—'तुम्हें मालिकी के मोह-पाश से मुक्त कर दिया। अब कोई कंकाल तुम्हें ईर्ष्या की नजर नहीं लगा सकेगा।'

कानों-कान गाँव भर में खबर फैल गयी। 'आखिर गणेश बाबू जो चाहते थे, वह करके ही माने! उनके पिता कैसे मान गये? भाइयों ने भी कुछ नहीं कहा? लालबहादुर ने भी मालकी छोड़ दी? वैद्यनाथ बाबू ने भी? रामसज्जन तो पहिले से ही औलिया था! परमानन्द इसी काम के लिए खादीग्राम से दौड़े आये। भाग्य को देखिये, हलवाहे भी आदमी बन गये।'—इसी तरह की चर्चा घर में, बाहर, बैठक में, जहाँ देखिये वहीं होने लगी। कुछ कहते, 'पूरा गाँव ऐसा हो जाय, तो बहुत अच्छा हो।' दूसरे कहते, 'अभी देखो, इन लोगों का काम ठिकाने से चलने लगे, तो हम लोग भी मिल जायेंगे। जल्दी क्या है?' जो इसे बेवकूफी समझ रहे थे, वे चुप थे। अविश्वास में तिरस्कार होता है, जो मूक होकर भी अत्यंत तीखा होता है। कुछ भी हो, गाँव में एक आदमी भी ऐसा नहीं था, जिसके अन्दर मंथन न मच गया हो। भूदान आज सबके लिए प्रश्न तो बन ही गया है, जिसका उत्तर दिये बिना अब गुजर नहीं है। भूदान लुभाने भी लगा है और चुभने भी!

६ बजे सभा हुई। पूरा गाँव मौजूद था। वैशाखी पूर्णिमा की शाम थी। चाँद की छटा एक ओर; मानवीय करुणा की छटा दूसरी ओर। दोनों में कौन बड़ी थी, कौन बताये? अगर मनुष्य की करुणा चाँदनी बन कर दुनिया में छिटक जाय, तो जितना शीतल चाँद है, उतना शीतल मनुष्य भी बन जाय। खैर! हरिभाई के दो भूदान-गीत हुए, लोक-प्रार्थना हुई और उसके बाद हर परिवार में से एक मुख्य व्यक्ति ने अपने स्वामित्व-विसर्जन की घोषणा की। गणेश बाबू के परिवार की ओर से खुद उन्होंने और उनके सबसे छोटे भाई ने घोषणा की। महत्त्व घोषणा के टूटे-फूटे शब्दों का नहीं था, महत्त्व था उसके पीछे काम करने वाली भावना का। कटुता के जीवन के स्थान पर करुणा के जीवन का संकल्प सुनाया जा रहा था। उसे सुन कर उस दिन मैंने भी अपनी चर्चा में इसी विषय का उल्लेख किया कि कैसे इतिहास में करुणा का विकास हुआ है। बुद्ध ने करुणा का धर्म स्थापित किया, गांधी ने चरखे को अहिंसा का प्रतीक बता कर करुणा की जीविका की योजना बनायी और विनोबा धर्म तथा जीविका का समन्वय कर रहे हैं—समाज को करुणा का परिवार बना रहे हैं। इन परिवारों को छोड़ कर बाकी गाँव के लिए मेरा यही आग्रह था कि जब कुछ परिवार इस तरह आगे जा रहे हैं, तो पूरे बोरने गाँव को फौरन ग्रामराज-समिति बना कर कम-से कम ग्राम-भावना बढ़ाने का तो काम शुरू करना चाहिए। उस दिन करुणा की गूँज में करीब नौ बजे रात को सभा का काम समाप्त हुआ। पूरे चाँद की कला देखते ही बनती थी! मनुष्य का मन मुस्कराता है, तो प्रकृति भी खिलखिला उठती है।

दूसरे दिन सुबह ९ बजे सब क्रान्तिकारी परिवार इकट्ठे हुए। बोरने तथा पड़ोस के गाँवों के कुछ और लोग भी थे। करुणा ने आठ की जगह एक परिवार तो बना दिया था, लेकिन करुणा की खेती कैसे होगी, करुणा के धन्धे कैसे चलेंगे आदि कई प्रश्न थे, जिनके बारे में सफ़ाई ज़रूरी थी। दो-ढाई घंटे चर्चा हुई। हम लोगों ने उनके सामने उत्पादन-वृद्धि, शोषणमुक्ति और जीवन-शिक्षण का त्रिविध कार्यक्रम रखा। उत्पादन-वृद्धि की दिशा में सबसे पहले कुल ६२½ बीघा ज़मीन नाप डाली जाय और एक परिवार में जितने सदस्य हैं, उनके हिसाब से अच्छी-बुरी भूमि हर परिवार को दे दी जाय। खेती पारिवारिक हो। उत्साह तो था सामूहिक खेती के लिए, लेकिन हम लोगों ने जोर दिया कि पारिवारिक खेती में सुविधा और स्वाभाविकता, दोनों हैं। खेती अपनी-अपनी हो तथा बीज, खाद, खरीद-बिक्री, बैल, सिंचाई आदि में अधिक से अधिक सहकार हो, यह योजना सबको पसंद आयी। तय हुआ कि बरसात करीब है, इसलिए बरसाती खेती में अनाज, चारा, साग-सब्जी और कपास की योजना सब लोग आपस में बैठ कर बना लें। अभी भूमिवाले सभी परिवार मिला कर कुल लगभग सवा छह सौ मन रबी पैदा करते हैं। उनका इरादा है कि इस बार ७२५ मन यानी २५ प्रतिशत अधिक अनाज पैदा करेंगे। खेती के अलावा धंधों में ये लोग फ़ौरन अम्बर चरखा शुरू करना चाहते हैं। लाल बहादुरजी और गणेश बाबू की पत्नी खादीग्राम जायेंगी और वहाँ से सीख कर आयेंगी। अब कपड़े के लिए घर का अनाज नहीं बिकना चाहिए, यह विचार सबके मन में पक्का हो गया है।

उत्पादन-वृद्धि के साथ-साथ शोषण-मुक्ति न हुई, तो सारी कमाई मालिक और महाजन के घर चली जाती है। अब ऐसा नहीं होने देना है। गणेश बाबू सोच रहे हैं कि अपने ही पाँच परिवारों की स्त्रियों से जेवर लेकर एक छोटी-मोटी दूकान खोल ली जाय, ताकि व्यापारी की मुनाफाखोरी से जान बच जाय। इसके साथ-साथ दूसरा सवाल क़र्ज़ का होता है। पुराने क़र्ज़ सामूहिक हो जायेंगे और क़र्ज़ देने वाले महाजनों से बात की जायेगी। उनसे क़र्ज़ का दान मांगा जायगा। और, क़र्ज़ भी जितना जायज़ होगा, वही माना जायगा। मालिक या महाजन धर्म या कानून में से किसीको तो मानें। नये क़र्ज़ की जरूरत होगी, तो परिवार-समिति लेगी, अलग-अलग परिवार नहीं। यह सब तय तो हुआ, लेकिन क़र्ज का सवाल जटिल है। अभी अम्बर चरखे से या खेती से जो बचत होगी, उसका कम-से-कम ५० प्रतिशत सामूहिक पूँजी बढ़ाने और पुराना क़र्ज़ अदा करने में खर्च किया जायेगा, बाक़ी ५० प्रतिशत खेती की तरक़्क़ी में।

जीवन-शिक्षण की दिशा में ठोस कदम उस दिन उठेगा, जब ग्रामशाला की स्थापना होगी। तब तक बच्चे नये सम्मिलित परिवार की सामूहिक कताई और प्रार्थना में शरीक हों तथा खेती और बाग़बानी के समय बड़ों के साथ खेत में जरूर जायँ और उत्पादन में जो कुछ कर सकते हैं, करें। उनके लिए श्रमिक बनने की यह प्रारम्भिक दीक्षा होगी।

अभी इन विचारों के साथ काम शुरू हो रहा है। परिवार-समिति (हर परिवार से एक सदस्य) की ओर सबकी निगाहें रहेंगी। अगर कुछ भी सफलता मिली, तो गाँव के बहुत से परिवार साल भर के अंदर शरीक हो जायेंगे। ग्रामराज की दिशा में बोरने का 'परिवार-दान' इस इलाक़े लिए एक ज़बरदस्त क़दम है।

"जिन लोगों ने जमीन की मालिकी छोड़ी है और बँटवारे में बहुत थोड़ी ज़मीन स्वीकार की है, वे महापुरुष हैं। उन्हींकी पुराण-गाथा गाने के लिए हम घूम रहे हैं!" —विनोबा

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

१४ जून सन् १९५७

लोकनागरी लिपि *

प्रेम-शक्ती कब प्रकट होगी ?

(वीनोबा)

जीधर प्रेम परीवार में कैद हो गया, अुधर प्रायवेट प्रापर्टी (नीजी मालकीयत) भी आ गयी ! जीससे झगड़े बढ़े, क्योंकी छोटे प्रेम का बचाव करते-करते प्रेम का व्यापक परवाह रुक जाता है, अुसका रूप ही बदल जाता है, जैसे "यह मेरा लड़का है, अुस पर मेरा प्रेम है," तो "वह मेरा लड़का नहीं है, अुस पर मेरा प्रेम नहीं है।" आगे चल कर तो अुस छोटे प्रेम को व्यापक द्वेष का रूप भी आ जाता है ! जीस तरह मेरे लड़के पर प्रेम याने बाकी के लड़कों पर अप्रेम ; मेरे परीवार की चींता याने दूसरे परीवार की अचींता होती है । जैसे प्रेम को बहुत अल्प प्रेम का याने व्यापक द्वेष का ही रूप आ जाता है । अगर स्पष्ट भाव में कहना है, तो वह प्रेम 'काम' के रूप में प्रगट हुआ है !

पानी का बहना अुतम हुआ और वह छोटी-सी जगह में रुक गया, तो पानी में कीड़े पड़ते हैं। फीर पानी का मूल धरम अुतम हो जाता है । वह पानी, जो जीवन है, जीस तरह मरण बन गया, अुसी तरह जो प्रेम अपने को अेक परीवार में सीमीत करता है, वह प्रेम 'काम' रूप हो गया । वह सड़ा हुआ प्रेम है । वह 'हक़' की बात करता है, देना-न-देना करता है । अैसा प्रेम मुक्ती का साधन बन ही नहीं सकता, बंधन का साधन बनता है । जीस तरह प्रेम कैद हो गया, तो अुसकी ताकत भी अुतम हो गयी और हींसा में ताकत मानी गयी । परीवारों में आज परस्पर-सहयोग की आवश्यकता है, ताकी प्रेम की ताक़त बढ़े । पर 'मेरे आपके घर पर पत्थर नहीं फेंकता और आपका मेरे घर पर नहीं फेंकते है,' यह प्रेम की नीगेटीव व्याख्या हो गयी । जीससे प्रेम की ताकत नहीं पैदा होती है । जीसा ने कहा था, अपने जीतना ही प्यार पड़ोसी पर करो । यहां तक की, दुश्मन पर भी प्यार करने को लीअे कहा है ।

जीस तरह दुश्मन पर भी जब हम प्रेम का हमला करेंगे, तब प्रेम की शक्ती प्रकट होगी । आज प्रेम डरपोक बना है । वह घर में बैठा है, पत्नी पर प्यार करता है, लड़के पर प्यार करता है, लेकीन पड़ोसी पर प्यार करने को लीअे डरता है और दुश्मन पर प्यार करने से कांपता है ! जहां फैलने की हीम्मत द्वेष कर रहा है, वहीं पर प्रेम डरता है । वह प्रेम मैदान में आता ही नहीं, घर में बैठा रहता है । यह मेरा 'कैसल' है, क़ीला है, सुरक्षीतता है, अैसा मानता है ! कुछ लोग पत्नी को परदे में रखते हैं, अुसी तरह प्रेम को ये लोग परदे में रखते हैं !

(तूरीचूर, १७-५-'५७)

* लिपि-संकेत ि = ी, ी = ै, ख = क्ष; संयुक्ताक्षर हलंत-चिह्न से

सर्वोदय की दृष्टि से–

ग्रामदान और सहभोज

भूदान-आन्दोलन से ग्रामदान का आन्दोलन कुछ भिन्न है । एक तरह से वह मुश्किल है, तो दूसरी तरह से बहुत आसान भी है । अपने पास की थोड़ी-सी जमीन से हिस्सा निकाल कर देने को जी नहीं चाहता । लेकिन समाज-रचना में ही परिवर्तन लाकर सारी जिम्मेवारी समाज को सौंप देना और फिर सबके साथ मिल कर अपने हिस्से में आयी हुई जिम्मेवारी उठाना सचमुच आसान है । अर्थात् छोटे-बड़े का भेद भूल कर सब जातियों के साथ ऐक्य-भावना से बरतने की और रहने की मानसिक तैयारी होनी चाहिए । असल में ग्रामदान का सवाल प्रधानतया आर्थिक नहीं है, बल्कि मानसिक, सामाजिक और धार्मिक जीवन-परिवर्तन का सवाल है । आपकी धार्मिकता और आपका आश्रम-जीवन इस कार्य में बहुत कुछ काम आयगा ।

मुझे लगता है कि ग्रामदान की पद-यात्रा में, जिस गाँव में मुकाम होगा, उस गाँव के लोगों को—सबके सब नहीं, किन्तु कुछ प्रातिनिधिक लोगों को, यात्री लोगों के साथ एकत्र भोजन करने के लिए बैठाना चाहिए । आपके स्वागत के तौर पर इस तरह का एक सहभोज का कार्यक्रम रहे । आपकी अध्यक्षता के नीचे ऐसे कार्यक्रम होने लगेंगे, तब जातिभेद का काँटा अपने आप भोथरा बन जायगा, टूट जायगा ।

सहभोजन की यह कल्पना अगर आपको जँच जाय, तो उसका जोर से प्रचार कीजियेगा । अगर लोग इस तरह के सहभोजन के लिए तैयार न हुए, तो नये ग्रामजीवन के लिए कैसे तैयार होंगे ?

अपनी निजी मिल्कियत किसीके पास न रहने के बाद ही शायद उच्च-नीच भाव नष्ट हो जायगा और सहजीवन का वातावरण पैदा होगा । साथ-साथ सहभोजन के लिए भी लोग तैयार होंगे ।

मेरे खयाल से सहभोजन से ही प्रारम्भ करना इष्ट होगा । अगर वैसा न किया, तो ग्रामदान अपरिपक्व होगा और उत्साह कम होने पर टूट जायगा । आप सब लोग सोच-विचार कर देखिये और अपनी राय मुझे सूचित कीजिये ।*

—काका कालेलकर

*एक मित्र को लिखे पत्र से ।

यह कैसा सौदा ?

…सत्ता से हृदय-परिवर्तन में बाधा आती है । जिन्होंने सत्ता चलायी, उनका जोर उनके जमाने के लोगों पर चला, ज्यादा नहीं चला । इतने राजा हुए, कौन पूछता है ? किसका असर आज है ? असर है आज वशिष्ठ का, उपनिषदों का, भगवान् बुद्ध का । यह क्या दिखाता है ? ये सारे नाम किनके हैं ? बुद्ध के हाथ में अधिकार था, पर उसने वह फेंक दिया सेवा के लिए । सेवा के लिए अधिकार मदद करता, तो उसे उसने क्यों छोड़ा होता ? लोग अशोक की बात करते हैं । वह तो बुद्ध की बुनियाद पर खड़ा है, नहीं तो उसे कौन पूछता ?

विचार-प्रचार और सेवा के लिए सत्ता बाधक होती है, क्योंकि उससे सामने वाले का दिमाग खुला नहीं रहता । जहाँ दंड-शक्ति हाथ में आयी, वहाँ मेरा दिमाग खुला नहीं रहता । लेकिन लोगों का दंड-शक्ति पर इतना विश्वास बैठ गया कि यह सब वे समझते ही नहीं ।

माता-पिता भी बच्चे को पीटते हैं, इसलिए कि उसका उत्तम शिक्षण होगा, वह विचार ठीक समझेगा ! परिणाम में भय से बच्चा स्कूल में नियमित जाना शुरू करता है । उनको लगता है, बच्चे में एक सद्गुण आया । लेकिन साथ ही भय भी स्थापित हुआ कि नहीं ? निर्भयता खोकर ही तो नियमितता आयी ! याने दो रुपये लेकर दो सौ रुपये गमाये ! नियमितता की कीमत कितनी और निर्भयता की कीमत कितनी ? बच्चा डर सीखा और मार कर आपने उसे डर की तालीम दी ! लाभ थोड़ा, नुकसान अधिक । कुल मिला कर नुकसान । अलावा सच्ची नियमितता भी नहीं सिखायी, गुण स्थिर नहीं हुआ । जब तक भय है, तब तक वह गुण है । भय से सीखा, इसलिए उस गुण की कोई कीमत नहीं ।

जहाँ सत्ता का प्रयोग होता है, वहाँ दिल खुलता नहीं और जहाँ दिल खुलता नहीं, वहाँ अंदर भावना पैठती नहीं ।

(कोट्टारकारा, क्विलोन, २७-४-'५७) —विनोबा

---

www.vinoba.in

साम्यवादी शासन और भूदान-यज्ञ

प्रश्न : केरल में साम्यवादी शासन है। वे भी जमीन का प्रश्न हल करना चाहते हैं और आप भी। तो दोनों की योजना में क्या फर्क है ?

विनोबा : फर्क इतना ही है कि वे लोग सोच रहे हैं और बाबा कर रहा है। सोचने में और काम करने में जो फर्क है, वही है !

सीलिंग का भ्रमजाल

हम जब उड़ीसा में घूमते थे, तब आंध्र की कम्युनिस्ट पार्टी ने घोषित किया था कि हमारी सरकार आयेगी, तो हम २० एकड़ तरी जमीन का सीलिंग करेंगे। याने पहाड़ खोद-खोद कर चूहा निकाला ! अगर गोदावरी-कृष्णा के किनारे २०एकड़ तरी जमीन का सीलिंग वे बनाते, तो भूमिहीनों को कुछ भी जमीन नहीं मिलती। वहाँ पर कम्युनिस्टों ने अपनी असलियत खो दी। उन्हें कहना चाहिए था कि हमारे हाथ में सत्ता आयेगी, तो हम जमीन की मालकियत मिटा देंगे। लेकिन वैसा वे नहीं कह सकते थे, क्योंकि वे अपने को 'प्रॅक्टिकल'-व्यवहारवादी समझते थे और बाबा को 'आयडियालिस्ट'-आदर्शवादी समझते थे। इसलिए वे अपनी मूल स्थिति बोल नहीं सकते थे। चर्चा में तो कबूल करते थे, परंतु काम करते समय २० एकड़ वाले सीलिंग की बात करते थे। यहाँ पट्टम थाणू पिल्ले (समाजवादी) की सरकार आयी। वे सोच ही रहे थे, इतने में उखड़ गये। परंतु सोच यह रहे थे कि १५ एकड़ तरी जमीन का सीलिंग बनाया जाय। आंध्र में यहाँ से दुगुनी जमीन है। इस हालत में यहाँ १५ एकड़ के सीलिंग से गरीबों को क्या मिलने वाला था ?

सर्वोदय की राह

इस प्रकार ये सारे सीलिंग के विचार में फँसे हुए हैं। हम उनसे कहते हैं कि सीलिंग का विचार क्या करते हो, 'रेशन' कर दो। सबको काम मिलना चाहिए, इसलिए सबको जमीन मिलनी चाहिए। किसीको तिगुना, चौगुना क्यों मिलना चाहिए ? पेट भर अन्न मिले, बस है; परंतु ये लोग कहते हैं कि जितना पेट भर अन्न हो सकता है, उससे तिगुना, चौगुना खाने का अधिकार देंगे। मैं आपको योगशास्त्र की बात बता रहा हूँ। वह कहता है कि आधा पेट अन्न से भरना चाहिए, पाव पेट पानी से भरना चाहिए और पाव पेट हवा के लिए खाली रखना चाहिए। लेकिन वे लोग कहते हैं कि इकॉनॉमिक होल्डिंग से तिगुनी जमीन रखने का अधिकार है और सर्वोदय कहता है कि जमीन सबको मिलनी चाहिए।

जब बाबा थोड़ी जमीन माँगता था, उस वक्त भी कहता था कि जमीन की मालकियत गलत है। हवा, पानी और सूरज की रोशनी के समान जमीन भी सबकी है। हम पहले से ही कहते थे, लेकिन माँगते थे थोड़ा-थोड़ा और जो मिलता था, उसमें संतोष कर लेते थे। यों होते-होते जमीन की मालकियत मिटाने की बात पर ही हम आ पहुँचे हैं।

पार्टी-विसर्जन की प्रक्रिया

अगर केरल की कम्युनिस्ट सरकार जमीन की निजी मालकियत मिटाने के विचार को पसंद करती है और जनता भी उसे पसंद करती है, तो पार्टी-पार्टी के भेद ही खत्म होंगे।

अभी पं० नेहरू बोले कि ग्रामदान का विचार बहुत अच्छा है, परंतु ग्रामदान होने के बाद जमीन सामूहिक की जानी चाहिए। ग्रामदान के बाद क्या किया जाय, यह आगे सोचा जायेगा। उस बारे में बाबा का कोई आग्रह नहीं है, परंतु जमीन की मालकियत सबकी होनी चाहिए, इस बात को पं० नेहरू ने पसंद किया। वे काँग्रेस के नेता हैं। याने काँग्रेस ने इस बात को पसंद किया। समाजवादी और कम्युनिस्ट तो इसे पसंद करते ही हैं और केरल के चर्चवालों ने भी जाहिर किया है कि बाबा का भूदान-ग्रामदान हम पसंद करते हैं। कितने ही बिशप बाबा के पास आये थे और उसे आशीर्वाद देकर चले गये। उन्होंने कहा कि आपका काम बहुत अच्छा है, ईसा मसीह की राह पर है।

चतुष्कोणों से मालकियत पर प्रहार

इस प्रकार धर्मसंस्था, अर्थसंस्था, राज्यसंस्था और बाबा का सर्वोदय, ये चारों एक ही बात बोल रहे हैं। इस हालत में आप लोग उसे उठा लेंगे, तो बाबा की यात्रा का सवाल ही नहीं रहेगा, जल्द से जल्द यह मसला हल होगा। कम्युनिस्ट शासनकर्ता क्या सोचते हैं, यह सवाल ही नहीं उठेगा।

यह जो मालकियत मिटाने का सवाल है, वह किसी भी सरकार से हल नहीं होगा, चाहे वह कम्युनिस्ट सरकार हो या और कोई सरकार हो। यह तो सबके सहयोग से होने की बात है। हम सब लोग चाहेंगे, तभी यह काम बनेगा। फिर कानून क्या करेगा ? 'अष्टादशोध्यायः भगवद्गीता समाप्तम्।' इतना लिखने का काम वह करेगा।

परंतु वे १८ अध्याय जब पूरे होंगे, तभी तो 'समाप्तम्' लिखा जायेगा ! अध्याय पूरे होने के पहले ही समाप्तम् नहीं लिखा जा सकता है। कानून याने क्रांति पर लोगों द्वारा की हुई सील। इससे ज्यादा कानून की सत्ता नहीं है। इसलिए आप और हम मिल कर काम करेंगे, तो यहाँ की शासन-संस्था भी अनुकूल हो जायेगी।

कानून को सर्वोदय कैसे बदलेगा ?

प्रश्न : सर्वोदय-आंदोलन देश के कानून में किस तरह फर्क लायेगा ?

विनोबा : सर्वोदयवाले चुनाव के लिए खड़े नहीं होते हैं। कुछ तो ऐसे होते हैं, जो वोट देने भी नहीं जाते। तो, प्रश्न है कि अलग रह कर ये कानून में बदल कैसे लायेंगे ? एक शख्स पेड़ पर नहीं चढ़ता, तो वह पेड़ को कैसे काटेगा ?

इसका उत्तर यही है कि वह पेड़ पर नहीं चढ़ता है, उससे अलग रहता है, इसीलिए उसे काट सकता है। सर्वोदय कानून के सारे पचड़े में नहीं पड़ता है, उससे बाहर रहता है, इसीलिए उसमें बदल कर सकता है। वह तो मालिक का कब्जा कर लेगा। सरकार में जाकर कानून-बनाने वाले तो नौकर हैं और आप सब मालिक हैं। हम नौकरों का कान क्यों पकड़ेंगे ? मालिक जैसा चाहेंगे, वैसा कानून बनाया जायेगा। **यह ध्यान में रखना चाहिए कि डेमोक्रेसी (लोकशाही) में कुल सत्ता जनता के हाथ में रहती है। जनता की भावना बदल गयी, तो सरकार का कानून बदलेगा।** अभी ग्रामदान मिलने लगे हैं। यद्यपि वे बहुत ज्यादा नहीं हैं, फिर भी ढाई हजार हैं और वे काफी अच्छे हैं, तो कम्युनिटी प्रोजेक्ट वाले मंत्री हमारे पास आते हैं और पूछते हैं कि इसमें हम क्या मदद दें ? पहले वे कहाँ पूछते थे ? अब वे ही हमारे पास आते हैं, हम उनके पास नहीं गये। हमारी यात्रा अपने मार्ग से चलती है। वे हमारे पास आकर पूछते हैं, तो हम कुछ सलाह भी देते हैं। अब वे उस पर सोचने लगे हैं। तो क्या वे अपनी योजना में फर्क नहीं करेंगे ? फर्क इसलिए करेंगे कि लोकमानस बदलने लगा है।

पार्लमेंट नहीं, जनता

बहुत लोगों का कहना है कि सरकार पर असर डालने के लिए पार्लमेंट में जाकर कैद होना पड़ता है। हम ऐसा नहीं समझते हैं, बल्कि हम तो समझते हैं कि जनता में जाकर कार्य करेंगे, तो पार्लमेंट पर असर होगा। **पार्लमेंट पर प्रभाव डालने का साधन वहाँ जाकर आवाज उठाना ही नहीं है। वह एक छोटा उपाय है। बड़ा उपाय यह है कि देश में जन-आंदोलन खड़ा करके जन-शक्ति पैदा करनी होगी, तब फिर उसका असर सरकार पर पड़ता है। इसलिए सर्वोदय में कानून में फर्क लाने की ताकत है।**

(चालकुटी, त्रिचुर ता० १५-५)

सबसे बड़ा ज्ञान !

आज विज्ञान के कारण हम नजदीक आये हैं, परन्तु हमारा आत्मज्ञान छोटा बना है। विज्ञान बढ़ा है, सृष्टिज्ञान भी हमारा बढ़ा है, परंतु आत्मज्ञान छोटा हुआ है। आज यहाँ का बच्चा-बच्चा जानता है कि जापान कहाँ है, चीन कहाँ है। वह 'वर्ल्ड पॉलिटिक्स'-दुनिया की राजनीति की भी बात करता है। विज्ञान के कारण इस तरह हम विशाल तो बनते हैं, परन्तु हमारा आत्मज्ञान छोटा बन गया। पुराने जमाने के लोग समझते थे कि हम सारी दुनिया के निवासी हैं। आज कोई कहता है कि हम केरल के नागरिक हैं, अफगानिस्तान के हैं, मिश्र के हैं ! यह सब आत्मज्ञान कम होने का परिणाम है। शंकराचार्य ने हमको बड़ी बात सिखायी है कि 'मैं कौन हूँ, यह पहचानो, समझ लो।' 'कोऽहम्' 'कस्यत्वम्'-'मैं कौन हूँ, यह पहले समझ लेने की जरूरत है।' अगर मैं देह हूँ, तो दूसरों से अलग होता हूँ। अगर ब्राह्मण हूँ, तो अब्राह्मणों से अलग पड़ता हूँ। मलयाळी हूँ, तो तमिलवालों से अलग होता हूँ। भारतीय हूँ, तो दूसरे देशों से अलग रहता हूँ। अगर जीव हूँ, तो जड़ से अलग हो जाता हूँ। इसलिए यह तय करो कि मैं कौन हूँ। मैं कौन हूँ, इसका जितना विशाल उत्तर आयेगा, उतने हम सुखी होंगे। जितना छोटा उत्तर आयेगा, उतने हम दुःखी होंगे, आपस-आपस में झगड़े होंगे। अतः सबसे बड़ा ज्ञान है-मैं कौन हूँ, यह हम जानें !

(पळयान्नूर, त्रिचूर, २२-५) —विनोबा

---

www.vinoba.in

सर्वोदय-सम्मेलन-सामग्री : २.

विश्वासपूर्वक संकल्प पूरा करें !

(विनोबा)

बहुत-सी बातें तो, जो बड़ी सभा होने वाली हैं, उसमें कही जा सकती हैं। परन्तु यहाँ छोटा-सा एक मंडल है और इसलिए गहरा चिन्तन यहाँ हो सकता है।

हमेशा एक समस्या व्यक्तिगत जीवन में साधक के सामने खड़ी होती है और वही सामाजिक जीवन में भी उपस्थित होती है। शुरू से हमने एक विचार के अलावा एक काल-मर्यादा भी लोगों के सामने रखी और अपने भी सामने रखी। इसलिए लोगों को आदत पड़ गयी और हमको भी वह बात दुहराते-दुहराते आदत पड़ गयी कि हम एक निश्चित काल-मर्यादा में अपना काम पूरा करेंगे। समस्या यहीं उपस्थित होती है कि काल-मर्यादा या कार्य के परिमाण की मर्यादा क्या किसी संकल्प का विषय हो सकता है ? जो कालमर्यादा और परिणाम-मर्यादा किसी एक व्यक्ति पर निर्भर नहीं है या चन्द लोगों पर निर्भर नहीं है, बल्कि व्यापक सामाजिक प्रयत्न पर निर्भर है, उसके विषय में क्या कोई संकल्प हो सकता है ? ऐसा प्रश्न सामाजिक क्षेत्र में आता है।

संकल्प की समस्या

साधक के व्यक्तिगत जीवन में भी ऐसा ही प्रश्न आता है। यदि चित्त-शुद्धि का संकल्प मैं करूँ, तो ठीक है। उसके पूरे-पूरे प्रयत्न का संकल्प करूँ, तो वह भी ठीक है; पर छः महीने में चित्त-शुद्धि होनी चाहिए या साल भर में फलाना दर्शन होना चाहिए, क्या ऐसा संकल्प हो सकता है ? या वह करना उचित होगा ? या उससे कोई लाभ होगा ? ऐसा प्रश्न अक्सर उठता है। इसका मैंने अपने मन में जो उत्तर दिया है, वह मैं आपके सामने रख देना चाहता हूँ। प्रयत्न की तीव्रता, संकल्प की तीव्रता पर निर्भर होती है। इसलिए कम-से-कम अवधि में मुझे अपना काम पूरा करना है, ऐसी भावना पुरुषार्थ से युक्त है। यह उसका बड़ा लाभ है। परन्तु वह लाभ प्राप्त होने के बजाय बहुत हानियाँ प्राप्त हो सकती हैं– अगर उस संकल्प के कारण चित्त का बोझ बढ़ता है तो। अभी हमारा एक संकल्प लोगों के सामने आया, जो कन्याकुमारी में हुआ और जिसके लिए दो दिन हम वहाँ रहे। शुभवचनपूर्वक वह शुभ विचार हमने समुद्र के अन्दर बैठ कर प्रकट किया। हम अपना अनुभव आपके सामने रखते हैं कि कुल कर्तव्य-बोझ उतर गया है। याने शुभ संकल्प के बाद इतना हलका मस्तिष्क हो गया है। याने अब कुछ फिकर ही नहीं रही, हमारे लिए चिन्ता का कोई अर्थ ही नहीं रह गया है।

एक दूसरे सिलसिले में हम चर्चा करते थे–'चिन्ता-मुक्ति' की। उस संकल्प के बाद परिपूर्ण चिन्तामुक्ति का हमें अनुभव हुआ। इसको हम एक कसौटी समझते हैं। संकल्प करते समय चित्त को अगर बोझ मालूम हो, तो वह संकल्प बाधक होगा, साधक नहीं होगा। परन्तु यदि संकल्प से बोझ एकदम उतर जाता है, तो वह संकल्प साधक के लिए बहुत लाभदायी है और समाज के लिए भी बहुत लाभदायी है। इसकी चर्चा बापू के साथ हुई थी। छोटे-से मंडल में हम बैठे हैं, तो थोड़ी गहरी चर्चा करने में बाधा नहीं, बल्कि लाभ है। आश्रम में हम व्रत लेते थे–ब्रह्मचर्य-व्रत, सत्य का व्रत इत्यादि। बहुत दफा हम ऐसा कहते थे कि ऐसे व्रत लेने की जरूरत क्या है ? ब्रह्मचर्य-पालन की कोशिश करें, पूरी कोशिश करें, पर व्रत की जरूरत क्या है ? यह एक प्रकार से मानसिक कमजोरी बताता है। यह आक्षेप बहुत दफा लिया गया और इस पर चर्चा भी हुई। एक बार दस-पाँच भाई बैठे थे, उस समय मैंने यह प्रश्न पूछा। मुझे लगता है कि व्रत लेने से अगर बोझ हलका हो जाय, तो समझना चाहिए कि व्रत लेना जरूरी या उचित था। लेकिन, अगर उसके कारण सिर दब जाता है, तो समझना चाहिए कि व्रत की हमको जरूरत नहीं थी, वह हमारी उन्नति का साधन नहीं हो सकता। तो वह चीज बापू ने एक दिन उठा ली और अपना अनुभव बताया : "ब्रह्मचर्य-व्रत का मैं प्रयत्न करता था, उसमें मुझे यश भी मिलता था; अयश भी मिलता था। जैसा हमेशा साधक के साथ होता है, वही होता था। परन्तु जब से ब्रह्मचर्य का व्रत ले लिया, तब से", बापू ने कहा, "मानो एक उत्तम से उत्तम रास्ता अपने लिए बना लिया। रास्ता उत्तम हो, तो मोटरवाला निश्चिन्त होकर मोटर ले जाता है। वैसे मेरे लिए एक रास्ता बन गया और वह व्रत मेरा लक्ष्य बन गया।" ऐसी भाषा बापू बोलते थे।

समय और संकल्प का स्थान

१९५७ को मुद्दत का साल मान कर कुछ लोग काम कर रहे हैं। उनका यह करना उचित है या अनुचित है, इसके विचार के लिए मैं उनके सामने यही कसौटी रखूँगा। अगर कालावधि का बोझ सिर पर मालूम हुआ कि अरे, अभी तो एक ही महीना हुआ, या तीन महीने हो गये या नौ महीने गये इत्यादि; और यदि ऐसा होता है कि इतने दिन हो गये, पर यह काम तो पूरा ही नहीं हो रहा है, या ऐसा होता है कि उतने थोड़े दिनों में इतना काम रहा है, तो पूरा उत्साह मालूम होता है; अर्थात् कभी काम नहीं हो रहा है, इसलिए निराशा होती है और उसका सारा बोझ चित्त पर डाल करके काम करते चले जायँ, तो वर्ष-समाप्ति के बाद निराशा ही हो सकती है। अगर अपयश मिला, तो भी प्रतिकूल प्रतिक्रिया नहीं होती है और यश मिला, तो भी उन्माद नहीं होता है, तो काल-मर्यादा का बोझ चित्त पर नहीं रहेगा। अयश मिला, तो कहेंगे कि ऐसे मार्ग पर चले हैं, जिसमें यश या अयश की चिन्ता नहीं थी। यश मिलने पर उन्माद आ जाय, तो मान लीजिये कि आगे पतन की राह हमारे लिए खुल गयी। तो हमें यह समझ लेना है कि यश और अयश, दोनों ही नुकसान दे सकते हैं। यह मैंने इसलिए कहा कि जयप्रकाश बाबू ने जो कुछ कहा, उसमें यह विषय आ गया कि हमारा एक ही संकल्प होना चाहिए। वह संकल्प है, जीवन देना। फिर भी यह बीच की मुद्दत मैंने रखी। उसके पीछे जो विचार है, वह किस प्रकार का विचार है, वह मैंने आपके सामने रखा। मन में जितनी तीव्रता होती है, भीतरी तीव्रता होती है, उतना ही मुद्दत का बोझ हलका मालूम होता है और गति तीव्र होती है। तब वह समय-संकल्प बहुत लाभदायी मालूम होता है।

अहिंसा में शब्दार्थ-विकास

अब दूसरी बात, अहिंसा में शब्दों का विचार। हिंसा में शब्द तोड़े जाते हैं। पुराने शब्दों को तोड़ते चले जायँ और उनकी जगह नये शब्द दाखिल करते चले जायँ या चंद लोग उन नये शब्दों को उठा लें और फिर उनसे जी ऊब जाय, तो उनके

एको देवः

पूरे समाज का कुल आर्थिक ढाँचा ही ऐसा बना है कि उस कारण आर्थिक क्षेत्र में ज्यादा से ज्यादा पाप होते हैं। दूसरे क्षेत्रों में इतने पाप नहीं होते हैं, जीवन के एक ही क्षेत्र में होते हैं, तो इसका अर्थ यह है कि आत्मा में बिगाड़ नहीं है। अगर आत्मा में बिगाड़ आया होता, तो जीवन के सभी क्षेत्रों में पाप ही पाप होता। समझना चाहिए कि अंदर कोई शुद्ध वस्तु बची है, परंतु समाज-रचना ही ऐसी गलत हुई है, इसीलिए गलत काम होते हैं।

वेदखली का उपाय भी ग्रामदान से होगा, यह समझना चाहिए। देश के बड़े-बड़े लोग, साम्यवादी पक्ष, काँग्रेस के मुखिया, देश के नेता और हमारे सारे सेवक, ये सब ग्रामदान के अनुकूल हैं। उस हालत में हम अपनी ताकत जरा बढ़ायें। भीम अपना भोजन करता था। इतने में बकासुर आता है और उसको मार लगाता है। भीम ने उससे क्षुब्ध होने से इन्कार कर दिया और अपना खाना जारी रखा। उसने सोचा कि ठीक है, जरा व्यायाम हो रहा है !! उस मार की परवाह न करते हुए पूरा-का-पूरा उसने खा लिया और फिर खड़ा हुआ और तब बकासुर को खतम किया। हम इधर-उधर ध्यान देते चले जायेंगे और समझेंगे कि उससे हम कारगर होंगे, तो वह शीघ्र होने वाली चीज नहीं है, बल्कि ग्रामदान का सही विचार हम समझेंगे और लोगों को समझायेंगे, तो हम शीघ्र कारगर होंगे। हम यह समझ लें कि अब ज्यादा दिन यह मालकियत टिकने वाली नहीं है !

—विनोबा

(सर्वोदयनगर, काळदी, ९-५)

www.vinoba.in

विपरीत या उनका गलत अर्थ निकालते चले जायँ या फिर उन शब्दों को तोड़ें और नये शब्द खोजें, इस तरह हिंसा की प्रक्रिया चलती है। अहिंसा में शब्द का ही विकास होता जाता है और उसमें नया-नया अर्थ ढलता जाता है। अभी गोरा ने एक लेख लिखा। उसमें उन्होंने बहुत कुशलता से लिखा है कि भूदान किस तरह से शुरू हुआ और उसका अर्थ किस तरह बदलता चला गया और अब किस तरह वह ग्रामदान तक पहुँचा है और फिर किस तरह उससे ग्रामराज्य निकलता है, इत्यादि-इत्यादि। पहले तो 'दान' शब्द पर ही आक्षेप था। लेकिन मेरा आग्रह था कि पुराने शब्दों को अगर हम तोड़ते चले जायेंगे, तो बिल्कुल दरिद्री बन जायेंगे। इसलिए उन शब्दों में शक्ति भरना अपना काम है। खेती में हम ऐसा ही तो करते हैं। जो पुरानी जमीन है, उसको फेंक करके कहीं दूसरे देश में तो नहीं चले जाते! उसी जमीन को जोतते जाते हैं, उसी तरह शब्दों की शक्ति बढ़ाते हैं। एक हद तक शक्ति बढ़ने के बाद फिर शब्द बदलता है। कुछ लोगों को लगता है कि वह शब्द बदलना नहीं चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि बदलना चाहिए। सहज ही 'भूदान' शब्द के बदले 'ग्रामदान' शब्द आ गया। कल ही बोलते-बोलते मैं बोल गया कि 'भूदान-यज्ञमूलक, ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रांति' इस सूत्र में अब 'भूदानमूलक' की जगह 'ग्रामदान-मूलक', शायद कहना पड़ेगा। ऐसा मैं बोल गया। लेकिन बोलते-बोलते ही मैंने कह दिया कि वह अर्थ 'भूदान' शब्द में ही निहित है, क्योंकि भूमि का सम-विभाजन करना है। 'भूदान' का ही व्यापक अर्थ 'ग्रामदान' शब्द से व्यक्त होता है। इससे आगे हम 'ग्रामदान' शब्द का ही प्रयोग करेंगे, तो भी भूमिहीनों की भूमिहीनता मिटाने का जो अर्थ 'ग्रामदान'में निहित है, उसका लोप नहीं होता। वह उसके अन्दर आयेगा और आगे 'भूदान' शब्द भी कहते रहेंगे। तो अब हम ऐसी मंजिल तक पहुँच गये हैं कि 'ग्रामदान' से कम अर्थ 'भूदान' से निकले, तो वह शब्द प्रिय नहीं होगा हमको। पेड़ में फल लग गये, तो हम कहते हैं कि आम लग गये। कच्चा आम हो, तो उसको भी हम आम कहते हैं। जब वह परिपक्व होता है, तो भी उसको आम ही कहते हैं। उसका नाम रखा—एक कच्चा और एक पक्का। आकार जब तक नहीं आया था, तब तक वह 'आम' नहीं था। लेकिन जहाँ उसको आकार आ जाता है, वहाँ वह 'आम' हो जाता है। तो, कच्चे, खट्टे आम से लेकर पक्के, मीठे, परिपक्व आम तक वह आम ही है। वैसे ही सामान्य जमीन लेकर बाँटना इत्यादि से लेकर मालकियत छोड़ देना और ग्रामदान दे देना, यह सारा 'भूदान' शब्द में भी आयगा और ग्रामराज शब्द में भी आयगा। शब्दों के लिए मैं अधिक आग्रह नहीं रखना चाहता, पर यह तो निश्चित है कि इसके आगे हमको लोगों के सामने बात रखनी होगी-ग्रामदान की ही। इससे एक और बहुत बड़ा लाभ होगा और हो भी रहा है कि ग्रामदान की बात पर किसीका कोई आक्षेप अब नहीं रहा है।

'राज्य' शब्द का विवेचन

एक सवाल गोकुलभाई ने पेश किया। बहुत सोचने की बात है। कुछ चीजें ऐसी होती हैं, जिनमें कोई दोष छिपा होता है। 'राज्य' शब्द के अन्दर भी एक दोष छिपा है। 'ग्रामराज्य' कहने से कुछ 'ऐक्सक्लूजिवनेस'—अलगपन आता है, संकोच आता है। हम दूसरों से कोई भिन्न हैं, ऐसा लगता है। इसलिए 'सर्वोदय' शब्द ही क्यों न इस्तेमाल करें, ऐसा सवाल उन्होंने पेश किया। कुछ शब्द होते हैं 'व्यापक' और कुछ शब्द होते हैं 'विशिष्ट'। 'मुझे यात्रा करनी है', यह एक व्यापक शब्द हो गया, 'काशी-यात्रा करनी है', यह विशिष्ट शब्द हो गया। 'सर्वोदय' शब्द अधिक व्यापक अर्थ में प्रयुक्त होता है। वह तो हमारे कुल विचार की बुनियाद है ही। परन्तु विशेष शब्द हमको रखना पड़ेगा, जिससे लोगों को विशेष प्रेरणा मिले, नहीं तो धर्म के मामले में जैसा हुआ, वैसा ही क्रान्ति के क्षेत्र में भी होगा। धर्मग्रन्थों ने मनुष्य के लिए एक सर्व-सामान्य ध्येय, मुक्ति बतलाया। हरेक मनुष्य ने मोक्ष अपना ध्येय माना। वह ध्येय इतना व्यापक था कि धीरे-धीरे उसके लिए तीव्रता कम होती गयी और वह क्षीण होता चला गया। हरेक ने एक-एक छोटे लक्ष्य को अपना ध्येय बना लिया और उसीको मोक्ष मानने लगा। इसलिए व्यापक और विशिष्ट, दोनों प्रकार के उद्देश्य लोगों के सामने रखने चाहिए। कोई ऐसा बड़ा ध्येय होता है कि जिसको मान्य करने में मनुष्य अपनी मुक्ति समझता है। वह समझता है कि इसको अमान्य करने में खतरा है, इसलिए इसको मान्य कर लेना चाहिए। पर उसके अलावा उसमें से कोई प्रेरणा नहीं मिलती। जब उनसे कोई विशेष साधना करने के लिए कहा जाता है, तब वे मानते हैं कि कोई चीज सामने आयी। वैसे ही सर्वोदय शब्द हमारे विचारों की बुनियाद में है, परन्तु जहाँ विशिष्ट कार्य की प्रेरणा हम लेते हैं, वहाँ विशिष्ट शब्द अच्छा होता है; और इसलिए ग्रामराज्य शब्द ठीक है। पर उसमें जो दोष उन्होंने दिखाया, वह पड़ा है। लेकिन उस शब्द को स्वीकार करना चाहिए, इसलिए कि उसमें बहुत बड़ा गुण भी है। कभी-कभी दोष में भी गुण होते हैं और उसके बिना हम समझा नहीं सकते, सामने वाला समझ नहीं सकता। उतना दोष कायम रखते हैं, तो झट समझ जाता है। कितने ही शब्द हमने सत्याग्रह में ऐसे चलाये, जो विचार के खयाल से सदोष हैं—अहिंसक युद्ध, नॉनवाइलेंट टेकनिक; इत्यादि-इत्यादि। आप सब लोग जानते हैं। ये सारे शब्द ऐसे हैं कि दोष उसमें आ जाता है।

भक्ति-मार्ग में भी ऐसा है। वहाँ ईश्वर को भक्ति के लिए जो शब्द निकाले, वे बहुत सारे शृंगार रस के हैं। शृंगार रस के साथ भक्ति का मिलान हुआ। इधर हमारी सत्याग्रह की पद्धति में हमने जो शब्द निकाले, उनका वीर रस से मिलान होता है। भक्ति-मार्ग के शब्दों की सारी परिभाषा कृष्ण, गोपी प्रेम, इत्यादि-इत्यादि सारी साधनाएँ, उसके शब्द कुल के कुल शृंगार रस से लिये हुए हैं। परन्तु उनके बिना चारा नहीं, क्योंकि जिस समाज में वे बोल रहे थे, उस समाज के लिए सबसे आदर्श-रूप जो वस्तु थी, उसीको ले करके उसका रूपान्तर उनको करना पड़ा। इस प्रकार हम समझते हैं कि चैतन्य आदि महापुरुषों ने शृंगार रस से समाज के चित्त को बड़ी कुशलता से भक्ति की ओर मोड़ा। वैसे ही जहाँ राज्य की परिभाषा चलती है—अमुक प्रकार का राज्य—ऐसी परिभाषा जहाँ चलती है, वहाँ ग्रामराज्य से विकेन्द्रित राज्य-व्यवस्था का हमारा अभिप्राय है, यह अर्थ एकदम से ध्यान में आता है। यह उस शब्द में बड़ा भारी गुण है। यद्यपि जो मूलभूत दोष गोकुलभाई ने बतलाया, वह उसमें रहता जरूर है, उस दोष के निराकरण का समय बाद में आयगा-याने जब वह एक चीज हाथ में आ जायगी और उसके आगे बढ़ने की जरूरत मालूम होगी, उस वक्त इस शब्द की शुद्धि की आवश्यकता हमको पड़ेगी। तो ग्रामराज्य शब्द में जहाँ यह दोष है, वहाँ लोकमानस को तैयार करने की दृष्टि से और हमारे अपने चिन्तन की दृष्टि से बड़ी अनुकूलता भी है। इसलिए वह जो शब्द मैंने रखा है, उसे कायम रखें।

एक सावधानी की सूचना

एक बात तो यह। दूसरी, इस शब्द के साथ समाज में विचार-शुद्धि की बात। बहुत दफा सुनता हूँ कि ग्रामदान में क्रान्ति क्या है? क्रान्ति तो तब होगी याने क्रान्ति का दर्शन तब होगा, जब ग्रामदान के बाद वहाँ हम कुछ रचना करेंगे, जिसमें सारे लोग सुखी हों, इत्यादि-इत्यादि। उत्पादन बढ़ाया, और भी जो करने की चीजें हैं, वे सब कीं, तब तो हम क्रान्ति कर सके। लेकिन ग्रामदान कोई खास क्रान्ति नहीं है। ऐसा विचार हम लोगों के मन में भी कभी-कभी आता है। इस पर हमने बहुत सोचा है और एक जगह जहाँ यह सवाल पूछा गया था, वहाँ उसके उत्तर में हमने सफाई भी एक व्याख्यान में दी थी। जहाँ ग्रामदान होगा, वहाँ सब सुखी होंगे, ऐसा वचन लोगों को हम देते चले जाते हैं। स्वराज्य के विषय में भी ऐसे ही वचन देते गये। परन्तु अब स्वराज्य के बाद लोगों का कुछ भ्रम-निवारण-सा हो रहा है। वैसे ही हम ग्रामदान के विषय में वचन देते चले जायँ और प्रत्यक्ष में कुछ न बने, तो लोग निराश हो जायँगे। इसलिए हमने कहा था कि ग्रामराज में जो चीज निश्चित रूप से होगी, वही हम आपके सामने रखते हैं। बहुत सुख की वृद्धि; फसल की वृद्धि हो भी सकती है और न भी हो, तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा। निश्चित रूप से क्या होना चाहिए, ग्रामदान के गाँव में? आज तो गाँव में एक फाका करता है और बाकी के लोग भोजन करते हैं। ग्रामदान के गाँव में फाके की नौबत आयगी, तो कुल गाँव फाका करेगा। ग्रामदान होने के बाद ग्रामराज्य का चित्र वहाँ दिखाने की सारी जिम्मेवारी हमको उठानी चाहिए और अगर हम नहीं उठा सकते हैं, तो सब्र करना चाहिए, ज्यादा ग्रामदान हासिल नहीं करने चाहिए इत्यादि बहुत बन्धन सिर पर आ जाते हैं। इसलिए हम लोग रुकते हैं। मैं मानता हूँ कि रुकने का कोई कारण नहीं है। अगर जिम्मेवारी है, तो वह सारे देश की है, सिर्फ ग्रामदान हासिल करने वालों की नहीं।

ग्रामदान का अर्थ

ग्रामदान का सच्चा अर्थ क्या है, यह दो-चार शब्दों में मैं कह दूँगा, जो मेरे मन में है। गाँव में जिनके पास जमीन है, कुल लोगों ने मिल कर दे दी, उतने से ग्रामदान नहीं हुआ। वे लोग अपनी जमीन आज तक अपने परिवार के लिए मानते थे, उन्होंने जाहिर किया कि यह जमीन ग्राम-परिवार के लिए होगी, गाँव को समर्पण होगी। वैसे ही मजदूरों को संकल्प करना चाहिए कि हमारा परिश्रम ग्राम का है। खयाल यह होता है कि इस आन्दोलन में, जिनके पास कुछ है, उनको तो देना है और जिनके पास नहीं है, उनको तो लेना ही लेना है। परंतु जिसके पास देने की कोई चीज ही नहीं है, ऐसा शख्स भगवान् ने पैदा ही नहीं किया। हरेक के पास जो कुछ भी है, उसे वह दे ही रहा है, लेकिन एक संकुचित क्षेत्र में देता है, उसीको व्यापक क्षेत्र में देना है। जिस

www.vinoba.in

गाँव के मजदूरों ने मजदूरी का दान दिया गाँव को, जमीन के मालिकों ने जमीन का दान दिया, इत्यादि-इत्यादि दान हुआ, वह गाँव ग्रामदानी है—पूरे अर्थ में। इतने अर्थ में ग्रामदान हो जाय, तो समझ लो, क्रान्ति हो गयी। उसके बाद उसको उपयोग करके अच्छा बनाना ऊपरी काम है, पर सब मिल करके यह पहले करें, परंतु उसका हम अपने सिर पर बोझ न समझें। कोशिश जरूर करें कि जो लोग ऐसे गाँव में जा सकते हैं, बैठ सकते हैं, वे बैठें, काम करें। जो इस काम के अधिक योग्य हैं, वे फौरन इसको उठा लें। एक श्रम-विभाग स्थापित हो सकता है। ये खादी-बोर्ड वाले हैं, कम्युनिटी प्रोजेक्ट वाले हैं, दूसरे रचनात्मक संस्था वाले हैं, ये सब इस काम को उठा लें। परन्तु हम अपने सिर पर इसका कोई बोझ न समझें। मानो हमने ग्रामदान के रूप में कोई भयानक काम ले लिया है और उसके बाद रचना का काम करते हैं, तभी ठीक है—नहीं तो एक पाप होगा, ऐसा हम न समझें।

एक साल की मर्यादा का अर्थ

जैसा बापू ने कहा था कि एक साल में स्वराज्य, वैसा भी अगर हम कहें कि एक साल में ग्रामदान, तो भी हमको सोचना ही होगा। सोचना इतना ही नहीं है कि लोकमानस पर उसका क्या असर होगा? यह महत्त्व की वस्तु नहीं। क्या सचमुच हम मानते हैं कि एक साल में काम हो जायगा? यही महत्त्व की चीज है। अगर मानने वाला और बोलने वाला सचमुच ऐसा समझता है, तब तो उसे बोलना चाहिए और लोगों को बतलाना चाहिए। जब किसीसे बापू की बात होती थी, तो मैंने देखा कि वे बिल्कुल पूरे अर्थ में सच्चे दिल से एक साल की बात कहते थे। उसका भी जो परिणाम होना था सो हुआ। एक साल में हम पूरे ग्रामदान करा देंगे, ऐसी भाषा अगर हम बोलेंगे, तो हमें देखना होगा कि दरअसल वह बात दिल से निकलती है या नहीं? अगर दिल में है, तो हम बोल सकते हैं। परन्तु लोकमानस के लिए उपयोग होगा, ऐसा सोच कर हम बोलेंगे, तो न लोकमानस के लिए वह उपयोगी होगा, न हमारे लिए ही उपयोगी होगा। इसलिए संकल्प में हमेशा यह देखना होता है कि संकल्प करने वाला अपने दिल से क्या बोलता है? अभी एक क्रिस्ती भाई ने कहा कि "तुम ग्रामदान की बात करते हो और यह भी कहते हो कि ईसा मसीह का पैगाम है और ईसा मसीह के शिष्यों ने पहले कम्यून बनाये थे और उसी पर से 'कम्युनिज्म' शब्द निकला है और क्रिस्ती लोगों का आवाहन करते हो कि मालकियत मिटाओ," आदि तो मैंने कहा कि "भाइयो, बताओ इसमें हम कौनसी गलती करते हैं?" तो उसने कहा कि "तुम यह नहीं सोचते कि वह प्रयोग किया किसने? लोगों ने स्वयं। कुछ साल चला, फिर टूटा।" मैंने पूछा, "क्यों भाई क्यों टूटा?" तो उस शख्स ने कहा कि "शिष्यों ने ऐसी आशा से किया कि अभी क्राइस्ट आ रहा है, अभी क्राइस्ट आ रहा है। क्राइस्ट ने कहा था कि मैं जाता हूँ और आता हूँ। अब यह प्रभु कह रहा है कि जल्दी से जल्दी मुझे बुलाओ, क्योंकि एक बड़ा भारी प्रलय आयगा और सब इधर का उधर हो जायगा, उस हालत में मैं कैसे आऊँगा? इसलिए प्रभु शीघ्र आ रहा है और प्रभु का राज्य भी शीघ्र ही आ रहा है! इसका परिणाम शिष्यों पर यह हुआ कि प्रभु आ ही रहा है, आ ही रहा है। लेकिन हकीकत में आया तो कुछ भी नहीं। न प्रलय आया, न ईसा आया। त्याग करके जो तकलीफ़ शिष्यों को उठानी पड़ी, सो तो उठानी ही पड़ी!" यह किस्सा आपके सामने मैंने रखा। मैं कहना यह चाहता हूँ कि क्राइस्ट ने जब यह कहा कि "प्रभु का राज्य आ रहा है, आ रहा है और तुम अपने पाप-पुण्यों का फैसला कराने के लिए खड़े हो जाओ", तो मानों उसे ऐसा दर्शन हुआ कि अपनी आँखों के सामने वह बिलकुल आ ही रहा है। वह आँख के सामने चित्र देख रहा था। जैसे भगवान् सामने खड़ा हो और पूछ रहा हो, "कम्बख्त, तूने क्या किया? अब जवाब नहीं दे रहा है!" यही हालत हमारी होगी। इस वास्ते हमको उत्तम आचरण करना चाहिए। तब मानों आँख के सामने कोई चीज देख रहे हैं, ऐसी भावना से मुँह से शब्द निकलेंगे। यदि वैसा होगा, तो एक साल में ग्रामदान क्यों नहीं पूरा होगा? ऐसा जिस किसीको अन्दर से लगे, चाहे किसीको भी लगे, चाहे शंकररावजी को लगे या सर्व-सेवा-संघ को लगे या मुझे लगे तो मैं बोल सकता हूँ, जिसे लगे, वह बोल सकता है। यह हो सकता है। पर मानने वाले को अपने मन में पूर्ण विश्वास होना चाहिए। दुनिया के गणित में वह आता हो या न आता हो। उस गणित में यदि आता हो, तो वही होगा। क्यों नहीं होगा? होना ही चाहिए। ऐसा विश्वास अगर हो, तो वैसी भाषा हम बोलें। अन्यथा इस साल में हमको पूरा प्रयत्न तो करना ही है। इसे क्रान्ति का साल हमने माना है। सब लोग सच्चे दिल से लगें, तो क्यों नहीं क्रान्ति हो सकती? इसलिए इसी साल हमको काम पूरा करना है, ऐसी उम्मीद रख करके काम में लग जाना चाहिए। उस प्रकार का आवाहन तो हम जरूर दें। परन्तु यह काम इसी साल होगा, होना चाहिए, ऐसा संकल्प हम जाहिर करें और हम स्वयं उसमें विश्वास न करें, यह उचित नहीं है।*

* सर्वोदय-सम्मेलन, कालड़ी में सर्व-सेवा-संघ की बैठक में, ९-५-'५७

भूदान-आंदोलन का रूपान्तर!

प्रश्न: गाँवों में घूमते हुए मैंने अक्सर देखा कि जमीनवाले या संपत्तिवाले लोगों के मन में एक ऐसा डर विद्यमान है कि १९५७ में उनके जान-माल पर आफत आयेगी। उनका डर और बढ़ता है, जब वे देखते हैं कि भूमिहीनों में से भी विचार-प्रचार के लिए लोग निकलते हैं। इस डर को मिटाने के लिए हम क्या कदम उठा सकते हैं?

विनोबा: क्या मालिकों ने यह तय कर लिया है कि अपनी गाँठ खोलेंगे ही नहीं और मालकियत का कब्जा बनाये रखेंगे? अगर उन्होंने ऐसा तय नहीं किया है, तो उनके भय का परिवर्तन प्रेम में हो सकता है। परिस्थिति का भान रख कर भय क्या है, यह अंदाज करके हम स्वयं प्रेम बाँटने के लिए तैयार होते हैं, तो भय भी खतम हो जायगा और नेतृत्व भी कायम रहेगा। भय का परिवर्तन प्रेम में असंभव नहीं। जैसे मनुष्य की मृत्यु होनी होती है, अतः उसे उसका भय भी होता है। लेकिन उस भय का रूपान्तर यदि देह से अलग रहने की आदत में हम करें, तो फिर चाहे सौ साल जीयें, चाहे आज मरें, कोई चिन्ता और भय नहीं होता है। अपने को देह से भिन्न भूमिका में रख कर हम मृत्यु-भय से मुक्त हो सकते हैं। उसी तरह इस आगंतुक भय का रूपान्तर वे प्रीति में कर सकते हैं। हम उन्हें यही समझायें।

भूमिहीन कार्यकर्ताओं को यह समझाना होगा कि यह देने का आंदोलन है, केवल माँगने का नहीं। इस गलतफहमी को हम हटा लें कि यह काम ऐसा है कि कुछ लोग माँगें और कुछ लोग दें। ऐसा नहीं है। हर एक के पास, चाहे वह गरीब-से-गरीब क्यों न हो, देने के लिए कुछ होता है। इसीलिए भूमिहीनों को श्रमदान करना है। **अब हम ऐसी मंजिल तक पहुँच गये कि इस आंदोलन ने शाश्वत धर्म का रूप ले लिया है। शाश्वत धर्म याने जो समान रूप से सभी को लागू होता है। एक बच्चा भी सूत की गुंडी दे सकता है। यहाँ तक कि अस्पताल में पड़ा हुआ कोई गरीब मरीज, जो सब दृष्टि से असहाय है, प्रेमदान कर सकता है—जैसे उसे मिलने के लिए आने वाले कुटुंबियों को जिस प्रेम और अपनत्व की निगाह से वह देखता है, उसी निगाह से वह सबको देखें याने अपने प्रेम को व्यापक कर दे। इतना उसने किया कि हम मानेंगे कि उसने काफी दे दिया।**

लोगों को समझाने का हमारा तरीका भी हमें बदलना चाहिए। सौम्य से सौम्यतर और फिर सौम्यतम की ओर हमने संकेत किया था। यह एक दर्शन है। हिंसा में तीव्र से तीव्रतम की ओर जाना होता है, अहिंसा में सौम्य से सौम्यतम की ओर। इस विचार का अर्थ धीरे-धीरे ही ध्यान में आता है। जैसे उसका असली अर्थ ध्यान में आया, तो एक कदम उठाया और निधिमुक्ति और तंत्रमुक्ति की। उसी तरह अब माँगने की नहीं, देने की शिक्षा हमें देनी होगी और वैसे हमें खुद को भी करना होगा। दीन, दरिद्री और गरीब की ताकत तभी प्रकट होगी, जब उनको यह भान होगा कि उनके पास भी एक शक्ति है, जिसे वे दे सकते हैं—लेकिन जो अभी तक समाज के लिए अर्पण नहीं की गयी थी। ऐसी प्रेरणा गरीब और श्रमनिष्ठ लोगों में आ जायेगी, तो उनसे किसीको भय नहीं, प्रेम ही महसूस होगा और तब श्रीमानों का हृदय-परिवर्तन सहज होगा। कोई मालिक अपनी मालकियत नहीं छोड़ रहा और भूमिहीन फिर भी वहाँ प्रेम और प्रामाणिकता से श्रमदान करता है, तो मालिक का परिवर्तन हुए बिना रह नहीं सकता। मजदूर का जीवन-परिवर्तन मालिक का हृदय-परिवर्तन करता है। वह देखेगा कि यह तो श्रमदान कर रहा है। वह उसे फिर ज्यादा मजदूरी देगा, पर अंत में जाकर जमीन ही दे देगा। इतनी कल्याणकारी शक्ति इसमें छिपी पड़ी है। आंदोलन की शक्ति "माँगने" में नहीं, "देने" में पड़ी है। ऐसे दे देने वाले लोग जब माँगने के लिए जाते हैं, तब मालिकों को भी प्रेरणा होती है। इस तरह हम भूमिस्वामियों के भय का रूपांतर भी प्रेम में कर सकते हैं।

गरीबों की शक्ति, 'माँगने' के लिए उन्हें प्रेरित करने से नहीं बढ़ेगी, बल्कि माँगने से तो दीनता बढ़ेगी। लेकिन 'देने' के लिए अगर हम उन्हें प्रेरित करेंगे, तो उनकी महान् शक्ति प्रकट होगी। इस तरह हम इस आंदोलन का रूपांतर करें।*

* कार्यकर्ताओं से प्रश्नोत्तर, कालडी, ११-५

www.vinoba.in

कार्यकर्ताओं के लिए कुछ कसौटियाँ

(विनोबा)

इस संमेलन में मैंने यह एक नया विचार रखा कि अगर एक ग्रामदान मिला, तो बोझ बढ़ता है, दस मिले, तो वह बोझ कम होता है और सौ मिले, तो और भी कम हो जाता है। अर्थात् जितने ज्यादा ग्रामदान मिलेंगे, उतना ही हमारा बोझ कम होगा। हमारे कुछ साथियों को ग्रामदान के बाद के नवनिर्माण-कार्य का बहुत बोझ मालूम होता है, इसलिए वे कहते हैं कि ग्रामदान जरा सँभल-सँभल कर ही हासिल करने चाहिए। लेकिन यह विचार गलत है। ग्रामदान के बाद के निर्माण-कार्य की जिम्मेवारी सबकी है, सिर्फ हमारी नहीं। सरकार, कम्यूनिटी प्रोजेक्ट (विकास-योजना) आदि सभी की वह जवाबदारी है। ऐसी परिस्थिति में जो राज्यकर्ता होंगे, उन्हें या तो राज्यपद से हटना होगा या राज्य का तरीका बदलना होगा। वे इतने मूर्ख तो नहीं हैं कि राज्यपद से हट जायँ! इसलिए वे अपना रवैया बदलेंगे। आज ग्रामदान के लिए सभी लोग अनुकूल हैं। इसलिए आप उसी पर जोर लगाइये। मुझे 'बोगस' (दिखावटी) ग्रामदान नहीं चाहिए। बाहर की मदद मिलेगी, ऐसी आशा से किया गया ग्रामदान लेना उचित नहीं है। ग्रामदान से गाँव की आंतरिक शक्ति बढ़नी चाहिए। लोगों को यह समझाइये कि ग्रामदान का विचार शुभ, कल्याणकारी और सर्वोपयोगी है। जगह-जगह से जोर लगना चाहिए। ऐसा मालूम होना चाहिए, मानों चारों तरफ से सुरंग लग रहा है और किला ढह रहा है। एकाध छोटा-सा सूराख बनाने से काम नहीं चलेगा।

प्रश्न :—क्या इस संमेलन से आपकी ताकत बढ़ी है?

एक कार्यकर्ता : नहीं, ताकत नहीं बढ़ी है, बल्कि बहुतेरों का भ्रमनिरास हुआ है।

विनोबा : मेरी शक्ति तो इस संमेलन से बहुत बढ़ी है। मैं हमेशा अपनी शक्ति से शक्ति नापता हूँ। केरल में गिरजे के पादरियों से लेकर साम्यवादी मुख्य मंत्री तक सब लोग इस काम के लिए अनुकूल हैं। इससे शक्ति बढ़ी है।

कोई अगर अन्धा बन कर यह मानता हो कि देश में चारों तरफ आग सुलग रही है, तो उसके अन्वेषन के कारण जो भ्रम पैदा हुआ, उसका निरास हो गया, यह अच्छा ही हुआ। यह भी ताकत बढ़ने का ही एक लक्षण है और भ्रमनिरास होना अच्छा ही है।

सहानुभूति का प्याला लबालब भरा है

मैंने इस संमेलन में दो बातें कही हैं। एक यह कि ग्रामदान जितने मिलेंगे, उतना हमारा बोझ कम होगा और दूसरी यह कि आज आपके लिए सहानुभूति का प्याला लबालब भरा है। यह चीज आपको पहचाननी चाहिए। आप अगर एकाध भी आड़ा-टेढ़ा शब्द बोलेंगे, दूसरों का मन तोड़ेंगे, तो आपका आंदोलन क्षीण होगा। यह आंदोलन हम सफल नहीं करेंगे, वह जनता के हृदय में प्रवेश पाकर ही सफल होगा। अब हमको किसीका खंडन करने की जरूरत नहीं है। हमारा कदम जरा भी इधर-उधर खिसका, तो सहानुभूति का यह भरा हुआ प्याला छलकने लगेगा और ढल कर खाली हो जायगा। अभी हम वर्षा में खड़े होकर "सबै भूमि गोपाल की। नहीं किसीकी मालकी॥" का मंत्र गाते हुए नाचे। उस वक्त कितना आनन्द मिला। लोगों को भी इस विचार में इतना ही आनन्द आना चाहिए। उनका डर दूर हो जाना चाहिए। उनके हृदय में हमें प्रवेश मिलना चाहिए। यदि आप इतना समझ लें कि अब हमारा काम सिर्फ आदमियों को जोड़ने का है, तोड़ने का नहीं, तो वह अवश्य यशस्वी होगा। यदि आप यह नहीं समझेंगे, तो भी आंदोलन तो सफल होगा ही, लेकिन आप विफल होंगे। इसलिए आपको परम नम्र बनना चाहिए। तीसरी बात, हिंदुस्तान के इस कोने में इस कालडी ग्राम में, दूर-दूर के प्रांतों से कितना बड़ा जन-समूह आया है। किसी तरह का व्यक्तिगत लाभ न होते हुए भी केवल प्रेम के कारण वह आया है। इस घटना का आकलन अगर आपको हुआ, तो आपका उत्साह बढ़ना चाहिए।

एक तारीख निश्चित क्यों नहीं?

एक तारीख निश्चित करके उस दिन सारे देश में, चाहे कागज पर ही क्यों न हो, जमीन की मालकियत समाप्त करने की कल्पना आपने* रखी। इस तरह की तारीख मुकर्रर करने की कल्पना ईश्वर का काम अपने हाथ में लेने के समान है। मेरी मृत्यु की तारीख निश्चित होगी, लेकिन वह मुझे नहीं मालूम। इसलिए तारीख निश्चित करना हमारा काम नहीं है। तारीख निश्चित न होने पर भी आगे आने वाला प्रत्येक दिन हमारे सामने है, ऐसा समझ कर उत्साह से काम में लगना चाहिए। चाहे कागज पर ही क्यों न हो, अगर नाटक करना है, तो भी उसके लिए ताकत चाहिए। नहीं तो खिलवाड़ होगी या फिर क्षोभ के कारण उसमें से हिंसक शक्ति पैदा होगी। दोनों तरफ से आपत्ति है। एक तरफ से उपेक्षा है और दूसरी तरफ हिंसा। हिंसा आपकी ओर से भले ही न हो, लेकिन भयभीत जमींदार मारपीट करता है। इस प्रकार दो तरह का खतरा है। उन खतरों से बचने के लिए बिलकुल ३१ दिसंबर '५७ की रात के १२ बजे तक हमें सारी शक्ति लगा कर काम करना चाहिए। उसके बाद यदि हम गाँव-गाँव में जमीन की मालकियत की परिसमाप्ति का प्रस्ताव करेंगे, तो उसका उपयोग होगा। उस हालत में सरकार को भी उसे मंजूर करना पड़ेगा। उस तरह का कानून भी बन सकेगा; क्योंकि उसके लिए हमारे काम का आधार रहेगा।

अहिंसा में अनुमान नहीं किया जाता

आज शहरों में आपका, जैसा चाहिए, वैसा प्रवेश नहीं है। बुद्धिवादी वर्ग आपके पक्ष में होना चाहिए; नहीं तो क्रांति नहीं होगी। वह वर्ग मोहग्रस्त भले ही हो, और उसको कुछ लेना-देना भले ही न हो, फिर भी उसका हमारे अनुकूल होना आवश्यक है। १९५७ की ३१ दिसंबर तक आपके क्षेत्र में कम-से-कम १००० ग्रामदान होने चाहिए। तब मैं आपके कार्य की शक्ति मानूँगा। यह कार्य भावना से होगा। भावना बदलने के लिए प्राणशक्ति की जरूरत होगी। हम लोगों में थोड़ी-बहुत बुद्धि-शक्ति है; लेकिन प्राणशक्ति कम है। ग्रामदानों की संख्या अगर बढ़ी, तो देश में प्राण-संचार होगा। प्राण-संचार होने पर तारीख निश्चित करना आसान होगा और उसका परिणाम भी होगा। आज ही अगर २ अक्टूबर का दिन निश्चित कर लें तो संभव है कि वह हास्यास्पद साबित हो। सत्याग्रह की शक्ति अपेक्षा (एण्टीसिपेशन) में नहीं होती। अगले क्षण में फलाँ चीज होगी, ऐसा अंदाज करना सत्याग्रह में नहीं बैठता। मैं कभी इस तरह से अंदाज नहीं करता। ऐसे कामों के लिए ईश्वर की ओर से संकेत मिलना चाहिए। हमें इस वर्ष भर के लिए ग्रामदान का जाप करना है। इस प्रयोग की परीक्षा '५७ के अंत में होगी। अगर उस प्रयोग से काम हो गया, तो ठीक ही है। लेकिन अगर काम न हुआ, तो आगे क्या करना है, इसकी अक्ल तब सूझेगी। लेकिन वह तभी सूझेगी, जब कि उसके पीछे हमारा साल भर का पूरा-पूरा काम होगा।

इसलिए आप आगे की कल्पनाएँ छोड़ दीजिये। सभी लोगों को, भूमिवानों को और भूमिहीनों को, दोनों को शांति चाहिए। ग्रामदान से मतलब इतना ही नहीं है कि जमीनवालों की जमीन बाँट दी जाय। धर्म सबके लिए लागू होता है। मजदूर को भी अपनी मेहनत गाँव के लिए समर्पित करनी चाहिए। उसे भी गाँव के लिए कुछ करना है। यह एक से लेने का और दूसरे को देने का तरीका नहीं है। वह तो वर्ग-कलह का लक्षण होगा। हमारा यह सिद्धांत नहीं है कि एक वर्ग को सिर्फ लेना ही लेना है, उसे चित्त-शुद्धि की जरूरत नहीं है। हमें तो वर्गों का ही निराकरण करना है। चित्त-शुद्धि की जरूरत सबको है, इसलिए मजदूर भी हमारा दाता है। उसे अपना श्रम गाँव को समर्पण करना चाहिए। अगर मजदूर की शक्ति बढानी है, तो उसे भी ऐसा मालूम होना चाहिए कि मैं भी कुछ दे रहा हूँ।

आपकी शक्ति बढ़ रही है या नहीं, इसके लिए मेरी और भी कुछ कसौटियाँ हैं। आप कार्यकर्ताओं को एक-दूसरे के साथ बिलकुल सगे भाइयों की तरह रहना चाहिए। यह एक कसौटी है। यह चीज कुछ आसान नहीं है। कार्यकर्ता अगर एकरूप और एकरस हुए, तो उसमें से बहुत बड़ी शक्ति उत्पन्न होगी। इसलिए आप ईश्वरमय वृत्ति से चलिए।

क्या "साम्ययोग" (मराठी भूदान-साप्ताहिक पत्र) प्रत्येक गाँव में पहुँचता है और सार्वजनिक रीति से वहाँ पढ़ा जाता है? यह भी एक कसौटी है। ऐसी कुछ कसौटियों से शक्ति का अंदाज हो सकेगा।

आपकी बुद्धि में कोई न्यूनता न रहे। सामूहिक-स्वरूप का काम करने वाले लोगों की बुद्धि में अगर न्यूनता रह गयी, तो समूह में भी न्यूनता रह जायगी॥*

---

* देखिये, श्री बंग का लेख, 'भूदान-यज्ञ', ता० २२ मार्च '५७

* मूल मराठी॥ नागपुर-विदर्भ के कार्यकर्ताओं के साथ, कालडी, ११-५-'५७

www.vinoba.in

निवेदकों की नामावली

["भूदान-यज्ञ" के ५ अप्रैल '५७ और १९ अप्रैल '५७ के अंकों में निवेदकों की नामावली छप चुकी है। उसके अतिरिक्त यह तीसरी नामावली दी जा रही है।

इनमें से कई भाइयों के पूरे पते दफ्तर में नहीं आये हैं। इन सब निवेदकों को विनोबाजी के दैनिक प्रवचन भी भेजने हैं। अतः निवेदक भाई अपने पूरे पते तुरंत लिखने की कृपा करें। प्रवचन १ जनवरी से भेजे जाते हैं। दैनिक प्रवचन का सालाना चंदा २०) अधिक से अधिक सितंबर अंत तक भेज दें। पता : **सर्व-सेवा-संघ, प्रकाशन, काशी।** --सं०]

	निवेदक-नाम	पता-क्षेत्र
बिहार :		
जिला पटना	श्री विद्यासागरजी	द्वारा-खादी भंडार, बख्तियारपुर
शाहाबाद	श्री प्रद्युम्न मिश्र	द्वारा-सर्वोदय-आश्रम,जमुधार,पो.करवन्दिया
गया	श्री संपत नारायण	औरंगाबाद के लिए–औरंगाबाद
	श्री पारसनाथ शर्मा	सदर सबडिविजन, शेरघाटी
	श्री ब्रजरंगी प्रसाद सिंह	जहानाबाद, मुखदुमपुर
	श्री श्यामसुन्दर प्रसाद	नवादा, पो० सोखोदेवरा
मुजफ्फरपुर	श्री डा० शत्रुघ्न प्रसाद सिंह	रामनगर, पो० वेरवा
	श्री राजेन्द्र मिश्र	सीतामढ़ी, द्वारा खादी-भंडार, सीतामढ़ी
	श्री अनिरुद्ध शर्मा	हाजीपुर, ,, ,, ,, हाजीपुर
दरभंगा	श्री गजानन दास	.....
सारण	श्री जलेश्वर दुबे	पो० ताजपुर फुलवरिया
चम्पारण	श्री प्रमोद कुमार मिश्र	वृन्दावन, पो० वृन्दावन, जिला–चम्पारण
भागलपुर	श्री नागेश्वर सेन	सदर सबडिविजन भागलपुर
	श्री बोधनारायण मिश्र	बांका के लिए–बिहार होटल, भागलपुर
मुंगेर	श्री रामनारायण सिंह	सदर सबडिविजन–पूरब
	श्री यमुना प्रसाद सिंह	,, ,, पश्चिम
	श्री पंचदेव तिवारी	जमुई सबडिविजन
	श्री ब्रजमोहन शर्मा	वेगूसराय
	श्री गणेश शर्मा	खगड़िया
संथाल परगना	श्री लक्ष्मीनारायण राय	.....
पूर्णिया	श्री विन्देश्वरी प्रसाद सिंह	सदर–सर्वोदय कार्यालय, पो० रानीपतरा
	श्री अनिरुद्ध प्रसाद सिंह	अररिया–सर्वोदय आश्रम, वैद्यनाथपुर
	श्री महावीर झा	कटिहार खांदी-भंडार, कटिहार
	श्री सत्येन्द्र नारायण सिंह	खादी-भंडार, किशनगंज
सहर्षा	श्री महेन्द्र नारायण सिंह	सर्वोदय आश्रम, महुआ, पो० अरराहा–[(सहरषा)
राँची	श्री बड़ालाल श्री कंदर्पनाथ शाहदेव	
पलामू	श्री ठाकुर कमलेश्वर प्रसाद सिंह उर्फ बच्चू बाबू	सदर सबडिविजन, ग्राम–करार, पो० पांकी
	श्री हजारीलाल शाह	द्वारा श्री शिवशंकर भगत, पो० लतेहर
	श्री गिरजा नारायण सिंह	गढ़वा
धनबाद	श्री शीतल प्रसाद तायल	वाणिज्य-वृत्ति, धनबाद
बंगाल :	**बर्दवान** श्री शिवसन्त चट्टोपाध्याय	पो० बरुआ महेश
हुगली	श्री ब्रज गोपाल अधिकारी	पो० पलास पाई, वाया–आमटा
कलकत्ता	श्री वनमाली जाना	
आसाम :	**कामरूप** श्री अमल प्रभा दास	
शिवसागर	श्री माणिक चंद शैक्या	
नौगाँव	श्री लीला बरा	
लखीमपुर	श्री सोमेश्वर बारूवती	
आंध्र :	**हैदराबाद** श्री उ० केशवराव	गांधी भवन, हैदराबाद
नलगोंडा	श्री जी० माणिक्य राव	सर्वोदय-कार्यालय, सूर्यापेट
मध्यप्रदेश :	**इंदौर** श्री शंकर मंडलोई	
बंबई राज्य :	**कुलाबा** आचार्य ढवण	**गोहीलवाड** श्री अरुण कुमार भट्ट
मध्य सौराष्ट्र	श्री जयंतीलाल मालधारी	**उस्मानाबाद** श्री शांताबाई नारुळकर
सोरठ	श्री मोहनलाल मांडविया	**अमरावती** श्री डा० मोरे
लाहौर	श्री मोहनलाल मोदी	**यवतमाळ** श्री चंदू नाईक
तमिलनाड :	**रामनाड** श्री आर० टी० पो० सुब्रह्मण्य नादर	लोक सेवक, वल्लीकुट्टी, नादर स्ट्रीट पो० विरुदुनर
मदुरै	श्री एस० वरदन्	अ० भा० सर्व-सेवा-संघ, खादी-वस्त्रालय, मदुरै
तंजौर	श्री टी. के. श्रीनिवास अय्यर	लोक-सेवक ८१६, वेस्ट स्ट्रीट, तंजौर
त्रिची	श्री एम. आर. पलनी स्वामी	अ० भा० सर्व-सेवा-संघ, तंजौर विभाग १०४ पलसी रोड, पो० वारियूर (जि० त्रिचिनापल्ली)
चिंगलपुट	श्री ए. के. रामकृष्ण रेडियार	लोकसेवक, पो० कालमपूड़ी (चिंगलपुट)
कोइंबतूर	श्री के. मुत्थुस्वामी गाइंदर	लोकसेवक, कॉटन मर्चेंट, तिरुपुर (कोइंबतूर)
सलेम	श्री इ. आर. नागराज अय्यर	लोकसेवक, पो० दौलतावाद (कृष्णगिरि, सलेम)
मद्रास शहर	श्री एस. वीरप्पन्	लोकसेवक, ३१ सी. एम. सी., रोड, मद्रास २१
द० अर्काट	श्री एस. आर. सुब्रह्मण्यम्	लोकसेवक, ५३।०., पुरुषोत्तम रेड्डियर, ३३, म० गांधी रोड, पांडेचेरी
उ० अर्काट	सर्वोदय-कार्यालय	अ० भा० सर्व-सेवा-संघ, वेल्लौर
कन्याकुमारी	,, ,,	,, ,, ,, नगरकोइल विभाग
तिन्नेलवेली	,, ,,	टी 5 अम्मन सन्नती स्ट्रीट, तिन्नेलवली
नीलगिरि	,, ,,	खादी-वस्त्रालय, ऊटी

सर्वोदय-संमेलन अंक :

नवें सर्वोदय-सम्मेलन, कालड़ी की सामग्री "भूदान-यज्ञ" के ता० २४ ३१ मई के अंकों में प्रकाशित हुई है। जो सज्जन उक्त दोनों अंकों की प्रतियाँ मँगवाना चाहें, वे साढ़े सात आना भेज कर शीघ्र मँगवा लें। थोड़ी प्रतियाँ ही बची हैं।

—व्यवस्थापक

प्रकाशन-समाचार :

निम्नांकित पुस्तकों के नये संस्करण निकले हैं :

			पृष्ठसंख्या	मूल्य
(१) शासनमुक्त समाज की ओर	(तृतीय सं०)	धीरेन्द्रभाई	११२	॥)
(२) त्रिवेणी	(चतुर्थ सं०)	विनोबा	१०४	॥)
(३) सत्संग	(द्वितीय सं०)	सुरेश राम भाई	१२०	॥)
(४) पावन प्रकाश	(द्वितीय सं०)	रामाश्रय दीक्षित	५६	।)
(५) साम्ययोग की राह पर	(तृतीय सं०)	दादा धर्माधिकारी	६४	।)

—अ. भा. सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी

विनोबाजी का पता : मार्फत, सर्व-सेवा-संघ, गांधीनगर तिरुपुर TIRUPUR (जि. कोइंबतूर)

विषय-सूची

१.	पत्रकारों के साथ—	दादा धर्माधिकारी	१
२.	कार्यकर्ताओं के साथ—	विनोबा	२
३.	संथाल परगने में नशाबंदी के लिए अहिंसक कदम	मोतीलाल केजरीवाल	३
४.	शराबबंदी और कम्यूनिस्ट सरकार !	विनोबा	३
५.	केरल की क्रांतियात्रा से–	महादेवी	४
६.	"हम आठ थे, अब एक होंगे !"	आचार्य राममूर्ति	४
७.	प्रेम-शक्ति कब प्रकट होगी ?	विनोबा	६
८.	सर्वोदय की दृष्टि से– ग्रामदान और सहभोज	काका कालेलकर	६ ६
९.	साम्यवादी शासन और भूदान-यज्ञ	विनोबा	७
१०.	विश्वासपूर्वक संकल्प पूरा करें !	,,	८
११.	भूदान-आंदोलन का रूपांतर !	,,	१०
१२.	कार्यकर्ताओं के लिए कुछ कसौटियाँ	,,	११
१३.	निवेदकों की नामावली, प्रकाशन-समाचार आदि	,,	१२

www.vinoba.in

सिद्धराज ढड्ढा, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, काशी, टे० नं० १२८५